अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) 卐 सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार 卐 एक प्रति २ आना

वर्ष-३, अंक-११ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, १४ दिसंबर, '५६

जमीन की मालकियत मिटाने का जो अखिल भारतीय संकल्प किया है, उसमें सबको शरीक होना चाहिए। हम जमीन की मालकियत मिटा कर जमीन सबकी बना देंगे। कारखाने वगैरह का भी लाभ सबको मिले, यह हम चाहेंगे। मजदूर-मालिक का भेद मिटा देंगे। सब भाई-भाई बनेंगे।

अभी चाऊ (चीन के प्रधान मंत्री) यहाँ आये हैं, तो 'हिंदी-चीनी भाई-भाई' का नारा दिल्ली में चलता है। जब बुल्गानीन आये थे, तब 'हिंदी-रूसी भाई-भाई' का नारा चलता था। मैं कहता हूँ कि अरे, पहले तुम गाँव के पड़ोसी-पड़ोसी तो भाई-भाई बनो! अगर ये भाई-भाई नहीं बने, तो क्या हिंदी-चीनी और हिंदी-रूसी भाई-भाई बनेंगे? हम 'वंदे मातरम्' बोलते हैं, परंतु रवि ठाकुर ने कहा था कि 'वंदे भ्रातरम् बोलने की जरूरत है।' हम अपने भाई को ही भाई नहीं मानेंगे, तो क्या माता को सुख होगा? अगर भारत माता हम सबकी माता है, हम सब भाई-भाई हैं, तो भाई को भाई का हक मिलना ही चाहिए।

अय्यामलय पाळेयम्, मदुरा, ३-१२-'५६ —विनोबा

क्रांति की राह पर-

(विनोबा)

पलनी में सर्व-सेवा-संघ का जो प्रस्ताव हुआ है, वह बड़ा ही क्रांतिकारी है। इन दिनों किसी भी काम को क्रांतिकारक कहने का रिवाज है। वैसा यह नहीं है। यह प्रस्ताव पूरे अर्थ में क्रांतिकारक है। क्योंकि तंत्र-मुक्ति ही उसका सबसे बड़ा अंश है। दूसरा अंश है—निधि-मुक्ति का। अब हमने कुल का कुल आंदोलन जनता पर सौंप दिया है। भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्षों के लोग यदि भूदान को चाहते हैं, तो वे भी भूदान में अपना जोर लगायें। इस तरह से सब जोर लगायें, परंतु जगह-जगह एकाध मनुष्य ऐसा होना चाहिए, जो एक जिले का मालिक नहीं, पर सेवक बन कर रहेगा। आज भी जो संयोजक हैं, वे मालिक के तौर पर नहीं हैं; फिर भी वे अधिकारी माने जाते हैं, क्योंकि उनके हाथ में एक समिति रहती है। फिर लोग कहते हैं, वह संयोजक और उसकी समिति काम करेगी! इससे हमारी ताकत कम होती है। यह काम किसी पार्टी का काम नहीं है। अगर लोग मानेंगे कि बाबा के काम की जिम्मेवारी भूदान-समिति की है, हमारी नहीं है, तो भूदान का भी एक पक्ष बनेगा! इस पर कोई हमसे पूछेगा कि 'आप यह सब जानते थे, तो फिर आपने यह सारा तंत्र खड़ा ही क्यों किया?' बात ऐसी है कि उसके बिना शायद इस काम का आरंभ करना ही मुश्किल हो जाता। बाबा के हाथ में कोई संस्था नहीं थी, इसलिए आरंभ में वैसी कुछ योजना की। परंतु एक साल पहले ही से हम उसे तोड़ना चाहते थे और वेजवाड़ा की बैठक में हमने कहा भी था कि यह सारा तोड़ दो और आंदोलन जनता पर सौंप दो। हमें लगता है कि उन्होंने अगर उस वक्त यह किया होता, तो आज हमारी ताकत ज्यादा बढ़ी हुई दीखती। परंतु उस वक्त मित्रों को लगा कि इससे शक्ति बढ़ने के बजाय क्षीण होगी, इसलिए हम धीरे-धीरे उसे खत्म करेंगे। साल भर हमारा उस पर चिंतन चलता रहा। हम कहना चाहते हैं कि ऐसे मामले धीरे-धीरे खत्म नहीं होते हैं। उसे तोड़ना ही पड़ता है। मनुष्य को विकास और निरोध, ऐसी दोहरी साधना करनी पड़ती है, यह ईशावास्य-उपनिषद् में कहा है। दुनिया भर के साहित्य में जितना परिपूर्ण विचार ईशावास्य के चंद ही श्लोकों में मिला, उतना और कहीं नहीं मिला। जीवन के लिए क्या-क्या चाहिए, इसका पूरा नक्शा ही ईशावास्य के अठारह श्लोकों में बताया है। उसमें यह आता है कि कुछ विकास चाहिए, कुछ निरोध। इतने साल विकास की कोशिश की, अब निरोध का मौका आया है। इसके बाद फिर विकास शुरू होगा, फिर कहीं निरोध। इस तरह काम चलेगा।

एक दफा पुराना ढाँचा खत्म करो, फिर नया कैसे करना, वह हमें सूझेगा। नहीं तो हमें अकल ही नहीं आयेगी। इस प्रस्ताव का अर्थ आपको ठीक से समझना चाहिए। इसके आगे एक जिले के लिए एक-एक मनुष्य रहेगा। उसके हाथ में न कोई संस्था रहेगी, न कोई संचित निधि। उसके सहयोग में किसी संस्था की योजना नहीं है। जंगल में हम अपना एक-एक सिंह का बच्चा छोड़ देंगे और वह अपना नसीब देख लेगा। जिस जिले के लिए ऐसा मनुष्य नहीं मिलेगा, वहाँ अपना काम नहीं होता है, ऐसा हम समझेंगे। वहाँ के लोग करना चाहें तो कर सकते हैं। परंतु हमारी तरफ से कोई मनुष्य नहीं रहेगा। हर जिले में काम हो, यह कोई हमने अपनी जिम्मेवारी नहीं मानी है! हमें कोई चुनाव थोड़े ही लड़ना है, जो हर जगह मनुष्य चाहिए! फिर भी हमारी कोशिश यही रहेगी कि हर जिले के लिए एक मनुष्य हो। उस मनुष्य में क्या-क्या गुण चाहिए, इस बारे में मैं कुछ कहूँगा।

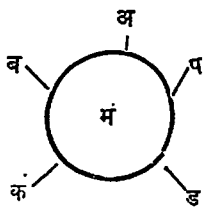

(१) उसमें यह गुण होना चाहिए कि वह सबका सहयोग हासिल कर सके, ऐसा प्रेममय होना चाहिए। हर एक के हृदय में जो ज्योति होगी, उसे वह देखेगा। इसलिए वह सभी पार्टियों का सहयोग हासिल करेगा। बल्कि, वह कुछ करेगा ही नहीं, उन लोगों से करवायेगा। वह उन लोगों के पीछे तकाजा लगायेगा। ऐसा सब लोगों के साथ मिलजुल सकने वाला मनुष्य चाहिए। जो सब पर प्यार करना चाहता है, उस पर यह जिम्मेवारी आती है कि वह किसी पक्ष के साथ जुड़ा हुआ नहीं रह सकता है। एक वर्तुल है। उस पर अ, ब, क, ड, प आदि १०-१५ बिंदु हैं। अगर हम चाहते हैं कि उन सब बिंदुओं से समान फासले पर रहें, सब पर समान प्यार करें, तो हमें कहाँ रहना चाहिए? जो वर्तुल की परीधि (सर्कम्फरेन्स) पर रहेगा, उसकी किसी के साथ ज्यादा दोस्ती होगी, तो किसीके साथ कम। वह किसी बिंदु से ज्यादा फासले पर रहेगा, तो किसी बिंदु से कम। इसलिए उसे वर्तुल के बीच में, मध्यबिंदु में रहना होगा। वह इस संस्था में नहीं, उस संस्था में नहीं; ऐसा नहीं-नहीं वाला मामला होगा। वह मध्यस्थ रहेगा। इसलिए वह किसी भी राजनैतिक पक्ष के अन्दर भी नहीं होगा। इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि सब पक्ष उसका बहिष्कार करें। जिसका सबने त्याग किया, वह ईश्वर का हो जायेगा। वह किसीका त्याग नहीं करेगा। वह कहेगा कि सबकी तरफ मेरी नजर है। 'कुरळ' के अनुसार 'उनर्चों वेण्डुम, पुनर्चों वेण्डाम्' (आसक्ति नहीं चाहिए, सबके लिए प्रेम चाहिए), यही उस मनुष्य का लक्षण होगा। इसलिए वह न किसी राजनैतिक पक्ष में रहेगा, न और किसी ऐसी संस्था में रहेगा, जहाँ चुनाव आदि चलते हों। हमारा मनुष्य सब पर प्यार करेगा और सबसे अलग रहेगा, यह उसकी एक बड़ी योग्यता होगी। (२) उसमें दूसरी योग्यता यह चाहिए कि वह सत्य, अहिंसा में मानता होगा और अपना जीवन अपरिग्रही बनाने की कोशिश करता होगा।

(३) उसमें तीसरी योग्यता यह चाहिए कि वह सेवा में कोई आंतरिक उद्देश्य नहीं रखता होगा, सेवा में कोई दूसरा उद्देश्य छिपा हुआ नहीं होगा। वह केवल सेवा के लिए सेवा, निष्काम सेवा करता होगा। ऐसी त्रिविध निष्ठा जिसमें है और जो अपना अधिक-से-अधिक समय इस काम में लगायेगा, ऐसा एक मनुष्य हर जिले के लिए चाहिए।

(तमिलनाड के भूदान-कार्यकर्ताओं के बीच भाषण, गांधीग्राम, ३०-११-'५६)

www.vinoba.in

'बहुमत' बनाम 'सहमति'

(धीरेंद्र मजूमदार)

प्रश्न : सर्व-सेवा-संघ के चुनाव-प्रस्ताव पर आपकी टिप्पणी देखी। आपने प्रस्ताव का स्पष्टीकरण करके बहुत सी शंकाओं का निवारण किया है। लेकिन आपने जो यह कहा है कि राजनीति के स्थान पर लोकनीति होनी चाहिए और लोकनीति में बहुमत के स्थान पर सर्वसम्मति से निर्णय-पद्धति ही होनी चाहिए, तो यह बात समझ में नहीं आती। आखिर यह कैसे संभव होगा कि सबकी एक ही राय हो? यह तो एक स्वप्न-राज्य में विचरण करना हुआ। चूँकि सब लोग एक राय के नहीं हो सकते, इसलिए व्यावहारिक राजनैतिक व्यक्तियों ने बहुमत का आविष्कार किया। मुझे सर्व-सम्मति की बात अव्यावहारिक मालूम होती है।

उत्तर : हाँ, अधिकांश लोगों को यह बात अव्यावहारिक मालूम होगी, क्योंकि अब तक लोग बहुमत के सिद्धांत के अनुसार ही काम करते रहे हैं। जब "राजतन्त्र" के स्थान पर "वोटतन्त्र" की बात चली थी, तब भी आम लोगों ने उसे अव्यावहारिक ही समझा था। पार्लमेन्ट-प्रथा के जन्मदाता मुल्क, इग्लैंड ने भी अभी तक राजा को कायम ही रखा है। वस्तुतः जिस दलील के कारण सर्वसम्मति सम्भव नहीं है, उसी दलील के कारण बहुसंख्यक लोगों का भी एक-मत होना संभव नहीं है। चूँकि प्रकृति में कोई दो वस्तुएँ हूबहू एक-सी नहीं होती हैं और चूँकि मनुष्य भी प्रकृति का ही एक अंग है, इसलिए किन्हीं दो व्यक्तियों का मत हूबहू एक नहीं हो सकता। सृष्टि के शुरू से आज तक जितने मनुष्यों का जन्म हुआ है, उनमें से किन्हीं दो मनुष्यों के अंगूठों के निशान तक एक-से नहीं हुए हैं। इसलिए आधे से अधिक व्यक्ति एक-मत के होंगे, यह सोचना भी गलत है। वस्तुतः जब एक पार्टी बहुमत की होती है, तो विभिन्न कारणों से उसके सदस्य एकसाथ हो जाते हैं। इस "एकमत" का नियामक पक्ष-प्रतोद ("Party whip") होता है। इस तरह आप जिसे बहुमत का राज्य कहते हैं, वह अन्ततोगत्वा दलपति के एकतन्त्रवाद में परिणत होता है। अतः आप यह न समझें कि हम इस बात को नहीं जानते हैं कि सब लोग एकराय के नहीं होते हैं, बल्कि हम उससे कुछ अधिक यह जानते हैं कि बहुसंख्यक भी एकराय के नहीं होते हैं। इसलिए हम "सर्वसम्मति" के स्थान पर 'सर्वसहमति' कहते हैं। दो व्यक्तियों में आपस में संमति है, ऐसा तब कहा जायगा, जब दोनों की राय एक हो। पर समाज में ऐसी स्थिति का निर्माण किया जा सकता है, जब एक-मत न होने पर भी एक-दूसरे के साथ चलने की वृत्ति हो सकती हो। उस समय एक व्यक्ति दूसरे की राय का साथ देता है। इसे "सहमति" कहते हैं। जैसे-जैसे समाज का सांस्कृतिक स्तर ऊँचा होता जायगा, वैसे-वैसे "सर्वसहमति" की परिस्थिति बढ़ती जायगी। आज भी हमारा पारिवारिक और सामाजिक जीवन सरकार के कानून की तुलना में अधिक परस्पर-सहमति के ही आधार पर चल रहा है। समाज में सर्वसहमति का विचार जैसे-जैसे आगे बढ़ेगा, वैसे-वैसे सांस्कृतिक स्तर भी ऊँचा उठेगा। इस तरह दोनों ही चीजें एक-दूसरे के विकास का कारण होती हैं। यही कारण है कि विनोबाजी एक ओर से जन्म से मृत्यु तक मनुष्य की प्रत्येक हरकतों को शिक्षा का माध्यम बना कर सामूहिक रूप से समाज के सांस्कृतिक विकास का कार्यक्रम बताते हैं और दूसरी ओर से प्रतिद्वन्द्विता-मूलक बहुमत के स्थान पर सर्व-सहमतियुक्त निर्णय पर जोर देकर लोकमानस में सांस्कृतिक विकास की भूमिका तैयार कर रहे हैं।

एक जमाना था, जब मनुष्य इस बात को सोच ही नहीं सकता था कि जनता आपस में मिल कर राज्य चलाने वाले को चुन सकती है। वह स्वप्न में भी यह नहीं सोच सकता था कि आम जनता में भी ऐसी शक्ति आ सकती है। उस समय राजतंत्र चलता था। विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार से लोग यह मानते थे कि मानव की सुशृंखलता कायम रखने के लिए राजा के रूप में किसीको स्वर्गलोक से भेजा गया है। "महती देवता राजा नर रूपेण तिष्ठति", यह समाज की धारणा थी। जैसे-जैसे मनुष्य का बौद्धिक तथा सांस्कृतिक स्तर ऊँचा होता गया, वैसे-वैसे राजा के स्थान पर चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा राज्य चलाया जावे, ऐसी मान्यता बनी और आज, जब कि मानव का अधिक ही विकास हो रहा है, वह यह भी सोचने लगा है कि राज्य के बिना ही सुव्यवस्थित समाज चल सकता है और बहुसंख्यक विचारक राज्यहीन समाज की कल्पना भी करने लगे हैं, अतएव गांधी या विनोबा जो कुछ कहते हैं, वह उनके व्यक्तिगत खयाली विचार नहीं हैं, बल्कि वह युग-परिस्थिति के उद्‌गार हैं।

जिस तरह ज्ञान, विज्ञान तथा संस्कृति के विकास के स्तर के आगे बढ़ने के साथ-साथ मनुष्य की राजनैतिक मान्यता आगे बढ़ती गयी, उसी तरह मनुष्य की सामाजिक मान्यता में भी परिवर्तन होता गया। पुराने जमाने में मनुष्य यह मानता था कि लोग आत्मरक्षा के लिए निरन्तर ही एक-दूसरे के साथ संघर्ष में लगे रहते हैं और उसमें से जो सबसे अधिक क्षमता रखते हैं, वे ही जिन्दा रहते हैं। यह विचार अंग्रेजी में ("Struggle for existence & survival of the fittest") के नाम से मशहूर है। अर्थात् समाज में "जिसकी लाठी उसकी भैंस" वाली मान्यता चालू थी। उस समय मानव का स्तर इतना नीचा था कि वह वैयक्तिक दायरे के बाहर सोच ही नहीं सकता था। और चूँकि व्यक्तिवादी विचार सर्वव्यापी था, इसलिए एक ही व्यक्ति सब पर राज्य करता था। कोई सर्वाधिक क्षमतावान व्यक्ति किसी इलाके में बाकी सबको दबा कर, राजा बन कर वंश-परम्परा से राज्य चलाता था। बाद को जब मनुष्यों का सांस्कृतिक तथा नैतिक स्तर ऊँचा उठा, तो उनमें "बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय" का विचार प्रसिद्ध हुआ और तदनुसार बहुमत के राज्य में बहुमत से निर्णय आदि का विचार चला। धीरे-धीरे मानव का ज्ञान-विज्ञान आदि का स्तर और ऊँचा उठता गया और आज मानव इस स्थिति पर पहुँच रहा है कि आज के विचारक "सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय" की बात सोचने में सफल हो रहे हैं और उसके अनुसार ही सर्वसम्मति के विचार सामने आ रहे हैं।

यह युगवाणी ही है

अर्थात्, "व्यक्तिगत सामर्थ्यवादी" युग में व्यक्तिगत व्यवस्था तथा निर्णय का विचार चलता था, फिर "बहुजनहितायवादी" युग में बहुमत के निर्णय की पद्धति चलने लगी और आज "सर्वजनहिताय वादी" युग में, सर्वसम्मति की व्यवस्था चलने की आवश्यकता हो गयी है। दूसरी व्यवस्था इस "सर्वजनवादी" युग में सम्भव नहीं है।

व्यक्तिवादी युग से प्रगति कर समाजवादी युग में पहुँचने के कारण मनुष्य का मानसिक परिवर्तन भी हो रहा है। व्यक्तिवादी युग की संग्रह-वृत्ति के कारण व्यापक क्षेत्र में मनुष्य के हितो में परस्पर-विरोध स्वाभाविक था, और हितभेद के कारण मतभेद भी अनिवार्य ही था। आज हम जब समाजवाद का विचार करते हैं, और संपत्ति के समाजीकरण की बुनियाद डालने की बात करते हैं, तो स्वतः ही हित-संघर्ष या हित-भेद के निराकरण की ओर बढ़ रहे हैं। जैसे-जैसे हित-भेद का निराकरण होता जायगा, वैसे-वैसे मतभेद का दायरा भी घटता जायगा। फिर सामूहिक हित के चिन्तन करने के सिलसिले में मनुष्य को "सहमति" के सिद्धान्त का अमल सहज रूप से ही करना होगा।

अतएव सर्वसम्मति का विचार इस युग की ऐतिहासिक आवश्यकता है। यह कुछ विनोबा के स्वप्न की कल्पना नहीं है। व्यावहारिक वह चीज होती है, जो जमाने की परिस्थिति तथा विचार के साथ चलती है। उसके आगेवाली चीज जिस तरह से अव्यावहारिक है, उसी तरह गुजरे हुए जमाने की चीज भी अव्यावहारिक होती है। साधारण मनुष्य इसे समझ नहीं पाते, इसलिए वे संकट में पड़ जाते हैं। फलस्वरूप मनुष्य को वस्तुस्थिति से परिचित कराने के लिए युगपुरुष की आवश्यकता हो जाती है!

चयनिका

आज कसौटी है, सोना नहीं। तर्क है, अनुभव नहीं। अनुभवहीन तर्क का उतना ही मूल्य है, जितना सोने के बिना कसौटी का।

मनुष्य स्वयं पत्थर बिखेरता है और स्वयं ठोकरें खाता है।

आज आलोचकों की भरमार है। मौलिक सृष्टा कम हैं, बहुत ही कम हैं। कारण सैद्धान्तिकता अधिक है, अनुभूति कम। सिद्धान्तवादिता में आलोचना प्रतिफलित होती है और अनुभूति से मौलिकता। सिद्धान्त से मौलिकता नहीं आती। मौलिकता के आधार पर सिद्धान्त स्थिर होते हैं।

जिस वस्तु में जिस व्यक्ति की श्रद्धा प्रबल हो जाती है, उसके लिए उसका समर्थ-सूत्र ही तर्क है। तर्कवस्तु वृथा है, शून्य है; श्रद्धा का उत्कर्ष ही तर्क है।

कोई भी वस्तु नितान्त अच्छी या बुरी, उपयोगी या अनुपयोगी, आवश्यक या अनावश्यक, उपादेय या देय नहीं होती। देश, काल, व्यक्ति और परिस्थिति के अनुसार उसमें विविध भावों का संगम होता है।

बुराई करने में संकोच नहीं होता, तब उसे स्वीकार करने में क्यों संकोच होना चाहिए? बुराई ऐसी क्या बढ़िया वस्तु है, जो उसे छिपा कर रखा जाये?

जिन घटनाओं की स्मृति-मात्र से एक सिहरन भी पैदा होती है, आँखें गीली हो जाती हैं, उनमें या तो उन्माद होता है या आशीर्वाद।

—मुनिश्री नथमलजी

---

www.vinoba.in

अब भूदान का काम कौन और कैसे उठावेगा ?

(विनोबा)

सात-आठ साल में इस संस्था का (गांधीग्राम, मदुरा) जो विकास हुआ है, उसका श्रेय हमारी बहन डॉ० सौंदरम् जैसों को है। एक छोटा-सा बीज आज वटवृक्ष की तरह बढ़ रहा है। वह बीज गांधी-विचार का था, जो कि एक अमर विचार है। उसमें सत्त्व भरा है। इसलिए जहाँ वह बोया जाता है, उगता ही है। जहाँ पानी देने वाले सेवक मिल जाते हैं, वहाँ वह बढ़ जाता है। यहाँ रामचंद्रन्‌जी जैसे मिल गये, तो परिणामस्वरूप उसकी छाया में सबको आश्रय मिल रहा है। इसे देख कर पुराने जमाने के विद्यापीठों की याद आ जाती है—जैसे नालंदा, जो भगवान् बुद्ध द्वारा दिये गये विचार का परिणाम था। दुनिया में इतनी तीव्र साधना करने वाले सबसे श्रेष्ठ पुरुष शायद गौतम बुद्ध ही थे। घोर तपस्या उन्हें करनी पड़ी। राजपुत्र मिट कर वे भूमिपुत्र बने। पचास साल वे पैदल-पैदल घूमे। उन्होंने एक विचार दिया, जिसके पोषण के लिए नालंदा जैसे स्थान निर्माण हुए। ऐसे महापुरुषों के रूप में भगवान् ने अपनी कृपा हिंदुस्तान पर सतत बरसायी है। स्थान में विशेषता नहीं होती है, विचार में होती है। जब विश्वव्यापक विचार निर्माण होता है, तो सारी दुनिया को वह एक नीड़ बनाता है। सारी दुनिया एक घोंसले में आ जाती है! "यत्र विश्वं भवति नीडम्।" सारा विश्व महसूस करता है कि मानवता सत्य है और भेद मिथ्या हैं। ऐसा एक विचार यहाँ भी काम कर रहा है, क्योंकि वह बलवान है और उसे यहाँ सेवक मिल गये हैं। ऐसी जगह पर आकर हमें बड़ी प्रसन्नता होती है।

पाँच साल से एक भारतव्यापी आन्दोलन चल रहा है। ईश्वर एक चीज उठा लेता है, तो तिनके का भी उपयोग कर लेता है। हमारी हस्ती ही क्या है? श्रद्धा से शुरू किया और वह फैलने लगा। अब हमने उस श्रद्धा की कसौटी लेना शुरू किया है। ईश्वर पर, गांधीजी के साथियों पर, अपने पर, जनता पर, सब पर हमारी श्रद्धा है। उसीकी परीक्षा हमने शुरू की है।

संगठन क्यों तोड़ा ?

जगह-जगह इस काम के लिए भूदान-समितियाँ बनीं और गांधी-निधि से मदद मिलती रही। प्रेम से वह दी जाती थी। वह ठीक भी था, क्योंकि इस अवधि में भूदान द्वारा गांधी-विचार जितना फैला, उतना शायद ही और किसी चीज से फैला होगा। इसलिए मदद देना और लेना, दोनों ठीक रहा। लेकिन अब हमने तय किया है कि न वे समितियाँ रखेंगे, न निधि से मदद लेंगे। ईश्वर के और उसके कार्य के बीच अगर कोई संघटन खड़ा होता है, तो वह बाधक भी बन जाता है। आदि-वासियों के बीच, सेवा के इच्छुक एक ईसाई भाई ने जब सलाह माँगी, तो हमने कहा, 'डू नॉट ऑर्गनाइज, संगठन मत करो, सीधी सेवा करते चलो।' उन्होंने कहा कि सेंट फ्रांसिस ने भी यही कहा था। मैं नहीं जानता कि ऐसा उन्होंने कहा था, लेकिन मेरा यह बुनियादी विचार है कि सद्‌विचार को हवा में फैला देना अच्छा है। जब वह जमीन में बोते हैं, तो उसका वृक्ष बनता है और लोगों को छाया मिलती है, लेकिन वह भी सीमित हो जाता है। चंद लोग ही उस छाया का उपयोग ले पाते हैं। परंतु यदि वह हवा में फैलता है, तो हरएक के हृदय को छूता है और कहाँ का कहाँ वह चला जाता है। इस एक साल में भूदान के विचार को ऐसा ही हम हवा में फैलाना चाहते हैं। उसके बिना शांतिमय क्रांति नहीं हो सकती। लोगों को पहले कुछ हिचक थी। लेकिन सबका संकोच टूट गया और सर्वसम्मति से यह स्वीकार हो गया।

गांधी-विचार को मानने वालों की कसौटी

अभी यह काम कौन करेगा? इसका सीधा सरल उत्तर है—ईश्वर के सेवक। वे कौन होंगे? ईश्वर जिन्हें चाहेगा। लेकिन व्यवहार में गांधी-विचार पर निष्ठा रखने वालों की जिम्मेदारी ज्यादा बढ़ जाती है। आज ऐसी हवा बन गयी है कि समझाने से जमीन मिलती है। लेकिन मुख्य बाधा यह है कि मानव-हृदय पर जैसा विश्वास चाहिए, वह सबको नहीं है। गांधीजी का सिद्धांत सर्वोदय, का सत्याग्रह का सिद्धांत है। बुनियादी निष्ठा उसकी यह है कि हरएक के हृदय में भगवान् मौजूद है, जो जगाये जा सकते हैं। जहाँ यह श्रद्धा नहीं होती है, वहाँ माँगने की हिम्मत नहीं होती है, विश्वास नहीं बैठता है। तेलंगाना से लेकर उड़ीसा तक भूदान का ग्रामदान के रूप में विविध प्रकार से विकास हुआ, फिर भी हृदय से शंकाग्रंथि गयी नहीं है। मुहम्मद पैगंबर ने कहा था कि 'तुम अच्छा काम कर भी लोगे, मरने के बाद ईश्वर की हाजरी में चले भी जाओगे और ईश्वर को अपने सामने भी देखोगे; फिर भी तुम्हारी शंका नहीं जायेगी और पूछोगे, क्या सचमुच यह ईश्वर है?' तो तुम्हारे हृदय पर एक मुहर, सील लगी है, उससे यह शंका होती है। उसे ही हटा दो। ईसा मसीह को भी कहना पड़ा था कि 'ओ, यू ऑफ लिटल फेथ'-कुछ तो श्रद्धा की जरूरत होगी। उसके बिना दुनिया में पराक्रम का काम हो नहीं सकता। जब छोटे पराक्रम में भी उसकी आवश्यकता है, तो जहाँ प्राणों से भी प्यारी जमीन, मालकियत छोड़नी हो, वहाँ श्रद्धा की कितनी अधिक जरूरत है! यह कुछ कठिन लगता है, क्योंकि आज कानून ने ईश्वर की जगह ले ली है। हृदय-परिवर्तन से कुछ हो सकता है, यह मानने के लिए मन तैयार नहीं होता है। लेकिन अब तक जो काम हुआ, वह कानून से हो नहीं सकता था। **इसलिए जिसका मानव-हृदय पर विश्वास होगा, वही इस काम का झंडा उठा सकेगा।**

यह विश्वास रखने के लिए गांधीजी के साथी बँधे हुए हैं। उनकी बातें आचरण में हम ला पाये हों या न ला पाये हों, लेकिन मानव-हृदय पर विश्वास रखने की हिम्मत भी यदि हम न कर सकें, तो गांधी-विचार का बोझ हम उठा ही नहीं सकते। वह हमारे लिए वास्तव में बोझ ही हो जाता है। पर दरअसल वह बोझ नहीं है। वह ऐसा सुंदर नाश्ता है, जो सिर पर रखा है और खाने के काम में आने वाला है। ऐसा वह मधुर भार है! परंतु जिसे पता नहीं, वह इसे पत्थर का भार समझता है।

इसलिए जो शंका लेकर जनता के पास जायगा, उसे वैसा उत्तर नहीं मिलेगा, जैसा श्रद्धा रखने वाले को मिलेगा।

काम का भार अब ऐसी संस्थाओं पर पड़ेगा। ईश्वर से हम कहेंगे कि "छह साल तक यह आंदोलन फैला, अब इसके आगे तू चाहता है कि वह सर्वव्याप्त हो, तो अपने दूसरे भक्तों को भी तू जगा देगा। तुम्हारी ऐसी मर्जी ही न हो, तो हम कुछ नहीं कर सकते।" जब तक हमारे पाँव, मन और वाणी में परमेश्वर ताकत देगा, तब तक हम दूसरों को जगाते रहेंगे, उसके फैलने की चिंता नहीं करेंगे।

मुख्य चीज तन्त्र-मुक्ति की!

जब तंत्र तोड़ा और संचित निधि का आधार भी छोड़ा, तो दूसरी कोई योजना हम कर ही नहीं सकते। निधिमुक्ति को बहुत ज्यादा महत्त्व हम नहीं देते। चंद दिनों में उसकी योजना हो सकती है। संपत्तिदान में से भी वह हो सकता है। स्थानिक शक्ति भी उसमें पैदा होती है। लेकिन मुख्य चीज है, तंत्रमुक्ति की! मानो शरीर ही चला गया, तो कैसे लगेगा? पर हमारा विश्वास है कि इस शरीर को, ढाँचे को अगर हम कायम रखते, तो काम तो अवश्य होता, लेकिन वह सीमित होता, पर वह अनंत-अपार नहीं हो पाता। इसलिए हमने तंत्र तोड़ा, जैसे कि पौध की रक्षा के लिए लगायी हुई बाड़ पौधे के बढ़ने पर तोड़ दी जाती है!"

गांधीवालों से

इसलिए दुनिया में गांधी-विचार को मानने वाले जितने भी लोग हैं, जितनी भी संस्थाएँ हैं, उन सबको इस काम की जिम्मेवारी उठा लेनी चाहिए। गांधी-विचार एकांगी नहीं, समग्र विचार है। अतः दूसरे-तीसरे काम करते हुए उसके साथ यह चीज जुड़ सकती है। इसके लिए अलग संगठन की जरूरत नहीं है।

हमने यह एक नया खतरा उठाया है। परिणामतः आंदोलन सूख भी जा सकता है, खूब व्यापक भी बन सकता है। भगवान् का नाम लेकर एक कदम उठाया, उसके जो परिणाम आने वाले हों, आयें।

जो भाई यहाँ काम करते हैं, उनको अपने काम के साथ इसे जोड़ कर यह उठा लेना चाहिए, यह हमारी माँग है। ज़रा अधिकार के साथ यह माँग है, क्योंकि आप हमारे समानधर्मी हैं, एक विचार में मानने वाले हैं, गुरुभाई हैं। हमारी इस स्थान पर श्रद्धा है। यहाँ एक व्यापक काम चल रहा है। लेकिन हम उसे बहुत महत्त्व नहीं देते, क्योंकि जो व्यापक दीखता है, वह कभी पोला भी रह जाता है। कई संस्थाएँ ऐसी हमें मालूम हैं, जब वे छोटी थीं, तो बड़ी तत्त्वनिष्ठ थीं, लेकिन डीलडौल में बड़ी हो गयीं, तो भीतर से खोखली भी हो गयीं। इसलिए आकार की नहीं, जिस श्रद्धा से, जिस विश्वास से काम शुरू किया, उसकी कीमत है और हम आपके उस विश्वास के साथ हैं।

(गांधीग्राम के कार्यकर्ताओं के साथ, २९-११-'५६)

www.vinoba.in

मलय-दर्शन !

(सिद्धराज ढड्ढा)

बहुत बचपन में, जब घर में धर्मकथाओं का पारायण हुआ करता था, मलय-गिरि का नाम अक्सर सुनने में आता था। नाम तो काव्यमय था ही, पर उसका वर्णन और भी काव्यमय होता था। "मलयगिरि में चन्दन का वन है, साँप उन पेड़ों को लिपटे रहते हैं, आदि।" और मन तुरन्त कल्पना के घोड़े पर सवार होकर मलय-गिरि में पहुँच जाता। पर मलयगिरि के प्रत्यक्ष दर्शन तो इस बार हुए। ता० १४ नवम्बर को सवेरे रोज की तरह विनोबा अपनी पदयात्रा पर निकले। हम लोग साथ थे। उत्तर से दक्षिण की ओर हम जा रहे थे। ठीक सामने, पूर्व से पश्चिम की ओर ऊँची गगन-चुम्बी पर्वत-माला खड़ी थी। उत्तर भारत में तो नवम्बर में शरद ऋतु का स्वच्छ, निर्मल, नीला आकाश दिखायी देता है, वर्षा कभी की समाप्त हो चुकी होती है। पर यहाँ दक्षिण में नवम्बर-दिसम्बर ही वर्षा के महीने हैं। अतः पर्वत-शिखर बादलों से घिरे हुए थे। हरियाली से ढँके हुए पहाड़ वर्षा ऋतु के आकाश से और बादलों से मिल कर एक अनुपम हरित-नील मनोहारी दृश्य उपस्थित कर रहे थे। यों तो मलयगिरि दक्षिण भारत के पश्चिमी तट पर सह्याद्रि के नीचे उत्तर से दक्षिण फैला हुआ है, पर उसकी कुछ शाखाएँ बीच-बीच में पश्चिम से पूर्व की ओर आड़ी पड़ी हुई हैं। हमारे सामने जो शृंखला थी, वह छः से सात हजार फीट ऊँची थी। जिस तरह आबू की पर्वतमाला एकदम मैदान से अपनी पूरी ऊँचाई तक उठी हुई नज़र आती है, उसी तरह पलनी की यह पर्वत-शृंखला भी सीधी मैदान से आकाश तक पहुँची हुई थी। पद-यात्री-दल के कदम ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहे थे, त्यों-त्यों सामने की पर्वतमाला और भी ऊँची उठती नजर आती थी।

पद-यात्रा के समय रोज सवेरे विनोबा के मुख से ज्ञान का अखण्ड झरना बहता रहता है। जो पद-यात्रा में साथ रहे हैं, उन्हें इसका अनुभव है। जैसे समुद्र के किनारे या हवाई अड्डों पर के प्रकाश-स्तंभ से निकली हुई किरण एक क्षण में चारों ओर घूम जाती है, उसी तरह विनोबा की बातचीत में प्रगट होने वाली ज्ञानकिरणें सहसा हजारों वर्षों के इतिहास, देश-देशान्तरों की स्थिति तथा आकाश के नक्षत्रों से लगा कर हंगरी और पोलैंड की वर्तमान घटनाओं तक सबको आलोकमय कर देती हैं। आज भी शंकराचार्य और रामानुज की ज्ञानगरिमा, सायणाचार्य द्वारा किये गये वेदों के भाष्य, ब्राह्मण-संस्कृति और श्रमण-संस्कृति आदि की चर्चा चल रही थी, पर बीच-बीच में विनोबा मौन होकर मलयगिरि के सौन्दर्य का निरीक्षण करते जा रहे थे।

पलनी, जहाँ पर सर्व-सेवा-संघ की सभा इस बार थी, करीब-करीब इस पर्वत-माला की तलहटी में स्थित है। दक्षिण प्रदेश जगह-जगह ऊँचे-गोपुरमवाले विशाल मंदिरों से जड़ा हुआ है। पलनी भी यहाँ का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। करीब चार सौ फीट ऊँची एक गोल पहाड़ी पर पलनी-स्वामी श्री सुब्रह्मण्यम् का विशाल मंदिर है। उन्हीं दिनों कार्तिक पूर्णिमा थी। इस दिन आसपास से हजारों आदमी पलनी-स्वामी के दर्शन और यात्रा के लिए आये हुए थे। दिन भर में यात्रियों की संख्या एक लाख के आसपास पहुँची थी, ऐसा बताया गया। मंदिर तक जाने के लिए नीचे से चोटी तक अच्छी, चौड़ी, पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। भक्तों ने दस-दस कदम पर विश्रामस्थान बना रखे हैं। रात को हरी बिजली की बत्तियों और सफेद ट्यूब लाईट से पहाड़ी जगमगा उठती है।

* * * *

पलनी में लिये गये निर्णयों के कारण यह सभा ऐतिहासिक हो गयी। पर सभाओं के निर्णय ऐतिहासिक हों या सामान्य, विनोबा के सान्निध्य में जितने क्षण गुजरते हैं, वे स्मरणीय हो ही जाते हैं। जैसा ऊपर बताया है, ये दिन दक्षिण में वर्षाकाल के हैं। काफी बारिश इस बार इन दिनों में हुई थी। कई दिनों सावन की-सी झड़ी लगी रही। इस महीने के शुरू में ही अभी विनोबा बीमार हुए थे। मलेरिया बुखार आया, तो आठ दिन यात्रा बन्द रखनी पड़ी। ता० १२ को ही वापस यात्रा शुरू की थी। कमजोर काफी थे। शाम को ठीक प्रार्थना के वक्त ही बारिश शुरू हुई। उस दिन सड़क के किनारे वाले एक छोटे-से कमरे के सिवा-जहाँ विनोबा को ठहराया गया था—आसपास सब खुला आकाश और धरती ही थी। सभा की व्यवस्था खुले में ही थी। ज्यों ही विनोबा सभा के लिए रवाना होने को उठे कि बूंदें पड़ने लगीं। आठ दिन की बीमारी से उठा हुआ कमजोर शरीर! महादेवी ताई, जो एक बेटी की-सी अनन्य भक्ति के साथ निरन्तर विनोबा की सेवा में रहती हैं, उनका दिल स्वाभाविकतया आशंकित हो उठा। उन्होंने विनोबा को रोक कर सभा वहीं कर लेने का आग्रह किया। एक क्षण के लिए विनोबा रुके, पर उधर मैदान में सभा-स्थल पर आसपास के करीब दो-ढाई सौ ग्रामीण स्त्री-पुरुष शान्ति के साथ बैठे प्रतीक्षा कर रहे थे। उन सबको उठा कर वहाँ बुलाने के बजाय विनोबा तुरन्त उधर चल पड़े। बीस-पच्चीस मिनट तक बारिश में भींगते हुए बोलते रहे। दूसरे दिन भी इसी तरह प्रार्थना-सभा के समय बारिश आयी। उस दिन बारिश और भी तेज थी। विनोबा और उपस्थित लोगों पर बराबर बड़ी-बड़ी बूँदों का अभिषेक होता रहा। बिहार में और उड़ीसा में पहले भी मैं कई बार इस तरह बारिश में होने वाली प्रार्थना-सभाओं में शामिल रहा हूँ। ऐसे प्रसंगों पर बराबर मैंने देखा है कि विनोबा के भक्त-हृदय की भावनाएँ उमड़ पड़ती हैं। आकाश के गिरने वाली जलधारा के जरिये मानों वे परम तत्त्व के साथ एकरूपता का अनुभव करते हैं। प्रार्थना-सभा में अपनी इस भावना को व्यक्त करते हुए विनोबा ने कहा :

परमेश्वर की साधना

"पचासों दफा हमारी सायंकालीन प्रार्थना बारिश में हुई है। बारिश में बहुत ज्यादा भाई सभा में नहीं होते, परन्तु जितने होते हैं, वे जब शांति से ईश्वर का स्मरण करते हुए बैठते हैं, उसका हमारे चित्त पर जो असर होता है, वह और किसी प्रकार से नहीं होता। हमने देखा कि उससे हमारी साधना दिन-ब-दिन गहराई में गयी है। इसको हम परमेश्वर की साधना समझते हैं।"

मुझे कई दफा लगा कि इस तरह सर्दी, गर्मी, बरसात, किसी भी बात की परवाह किये बिना सतत पदयात्रा और प्रार्थना-क्रम जारी रख कर अपनी अखण्ड भक्ति से यह भक्त भगवान् को चुनौती दे रहा है। आज की प्रार्थना-सभा में स्वयं विनोबा के मुँह से इसकी ताईद हुई : "हमारा विश्वास है कि बारिश में शांति से ईश्वर का स्मरण करते हुए हम बैठते हैं, तो उसके परिणाम-स्वरूप हमारा काम बढ़ाने की जिम्मेवारी ईश्वर पर आती है। और काम हमारा क्या है? काम तो उसीका है। वह हमसे करवा रहा है। वह हमसे करायेगा, तो दूसरे से भी करायेगा। हम पर क्या जिम्मेदारी है? यही कि हम अपनी भक्ति को खण्डित न होने दें!"

ज्ञानी और भक्त की बात दूसरी है, पर हमारे जैसे साधारण मनुष्य के मन में यह डर होना तो स्वाभाविक है कि बीमारी के तुरन्त बाद कमजोर शरीरवाले व्यक्ति को इस तरह बारिश में भींगना अच्छा नहीं है! आसपास के लोगों की इस आशंका का मानों जवाब देते हुए विनोबा ने आगे कहा—"बारिश शरीर पर बरसती है, तो वह परमेश्वर का स्पर्श ही है। हमारा विश्वास है कि बारिश से किसीको बीमार पड़ने का कोई कारण नहीं। बारिश से, सूर्य-किरणों से और खुली हवा से तो आरोग्य मिलता है। अभी चार दिन पहले हम बीमार थे और अभी हम बारिश में बैठे हैं, फिर भी हमारे मन में जरा भी शंका नहीं आती कि कहीं हम फिर से बीमार न पड़ जायँ। बारिश का बीमारी के साथ कोई ताल्लुक नहीं है, बल्कि यह तो ईश्वर का स्पर्श है।" इस अनन्य श्रद्धा और भक्ति के सामने दूसरे प्रकार की कोई दलील करना पामरता ही मालूम होती है।

पर विनोबा की विशेषता यह है कि वे केवल शुष्क ज्ञानी या कन्दरावासी भक्त नहीं हैं। वे एक कर्मयोगी हैं—स्थितप्रज्ञ हैं—और इसलिए छोटी-से-छोटी बातों पर नजर रखते हैं। यही कारण है कि वे हमारे जैसे छोटे-छोटे और कमजोर कार्यकर्ताओं को अखण्ड प्रेरणा देते रहते हैं। पलनी की सभा में ऐतिहासिक निर्णय हुए, वे उपस्थित-अनुपस्थित सबको रोशन हो जायेंगे, पर मालूम नहीं कि सर्व-सेवा-संघ की सभा में पहला भाषण, जो विनोबा ने दिया था, उसके अन्त में अपने बीमार होने के सिलसिले में उन्होंने जो कुछ कहा, उसकी ओर कितने लोगों का ध्यान गया। नवम्बर के शुरू में बीमार हुए, उसका जिक्र ऊपर आ चुका है। विनोबा से इस बारे में कहा :

सत्त्वगुण : कसौटी पर!

"हम बीमार पड़े, इसके वास्ते हमको लज्जा का अनुभव होता है। इस बीमारी का बाहरी परिस्थिति में कोई बहुत कारण है, ऐसा हम नहीं मानते। मनुष्य को सतत भान नहीं रहता, तो उससे त्रुटि हो जाती है। वह त्रुटि जो भी रही हो, हमने देख ली है। हमें बीमार नहीं पड़ना चाहिए था। यह बीमारी टल सकती थी, ऐसा हम समझते हैं। भगवद्गीता में सतोगुण का लक्षण दिया है—"प्रकाशकम् अनामयम्"—याने वह ज्ञानरूप प्रकाशमय होता है और उसमें आमय याने रोग नहीं होता। वह आरोग्ययदायी होता है। यह माना जाता है कि सतोगुणी लोग नीतिमान होते हैं, चरित्रवान होते हैं। लेकिन निःसंशय वे तीव्र बुद्धिवाले होते हैं, यह नहीं माना गया

www.vinoba.in

है। और ऐसा तो बिलकुल ही नहीं माना गया है कि सतोगुणी मनुष्य को बीमार नहीं होना चाहिए। जहाँ कुछ बीमारी हुई, वहाँ कुछ-न-कुछ रजोगुण-तमोगुण आया है, ऐसा तो लोग बिलकुल मानते ही नहीं। प्रकृति का धर्म या ईश्वर के हाथ की वह बात मानी जाती है। ईश्वर के हाथ में तो सभी कुछ है, सिर्फ यही नहीं। पर उपरोक्त गीता-वचन का अर्थ है कि सतोगुणी मनुष्य ही तीव्र बुद्धिमान और निरोगी हो सकता है, ऐसा विश्वास उस वचन पर है। मैं मानता हूँ कि सतोगुण में जैसे चरित्र और नीति होती है, उसी तरह कुशाग्र बुद्धि और संपूर्ण आरोग्य भी होना ही चाहिए, नहीं तो सतोगुण में कुछ कमी है। मुझे अनुभव भी ऐसा ही आया है। बिना किसी कसूर के कभी मैं बीमार हुआ ऐसा, जब से कुछ भान हुआ है, तब से अनुभव नहीं हुआ है। कहीं-न-कहीं गलती हुई है और उस गलती का दर्शन भी हुआ है। उसके वास्ते क्षमायाचनापूर्वक मैं यह समाप्त करता हूँ!"

हम आये दिन बीमार पड़ते हैं और अक्सर उसके लिए मौसम को या ईश्वर को जिम्मेदार मानते हैं। अपनी कोई गलती है, यह जानने की चिन्ता नहीं करते, जानने की कोई जरूरत भी नहीं समझते। गलती कभी मालूम भी हो जाय, तो उसके लिए समाज से माफी माँगने का तो सवाल ही मन में नहीं उठता, क्योंकि हमारे जीवन इस तरह कहाँ समर्पित हैं? हममें से कितने ही जीवनदानी हैं! जीवनदान का अर्थ कितना गहरा है, यह इस बात से मालूम होता है कि विनोबा ने अपने बीमार पड़ने की सार्वजनिक रूप से माफी माँगी! सतोगुण में कहीं कमी रही, इस बात से एक साधक के नाते उनका अपना ही संबंध है, पर एक समाजनिष्ठ कर्म-योगी के नाते वह समाज के प्रति भी अपराध है, यह विनोबा ने पलनी की उस सभा में अपनी बीमारी के लिए माफी माँग कर जाहिर किया।

इस बार १५ दिन दक्षिण के उस रम्य प्रदेश में रहने का मौका मिला। आखिरी ५-६ दिन हमारे 'गांधीग्राम' में बीते। यह दक्षिण की एक प्रमुख संस्था है। नयी तालीम के साथ-साथ वहाँ आज बड़े पैमाने पर कम्यूनिटी प्रोजेक्ट तथा सरकार के अन्य समाज-कल्याण-कामों के लिए कार्यकर्ताओं का शिक्षण होता है। करीब आठ सौ से एक हजार तक स्त्री-पुरुष, छात्र-शिक्षकों का समूह इस संस्था में है। इसके संचालक पुराने गांधी-वादी रचनात्मक कार्यकर्ता और अ० भा० ग्रामोद्योग-संघ के भूतपूर्व मंत्री श्री० जी० रामचन्द्रन् तथा उनकी सहधर्मिणी डा० सौंदरम् हैं। इतनी बड़ी संस्था का कार्य-संचालन करते हुए जितनी सूक्ष्मता से वे हमारी देखभाल रोज करते थे, वह आतिथ्य-कला का एक उत्कृष्ट नमूना ही माना जायगा।

विनोबा का प्रत्यक्ष दर्शन और उनकी बातों का श्रवण तो हर बार आगे के लिए नया पाथेय देता ही है। वह पाथेय लेकर ता० २८ नवम्बर को वापस उत्तर के लिए हम रवाना हुए।

क्रांति की वाहिका नयी तालीम

(नेमिशरण मित्तल)

नयी तालीम साम्ययोगी क्रान्ति की वाहिका है। लोगों को इसके इस स्वरूप को पहचानना चाहिए। जो लोग सचमुच इस क्रान्ति को लाना चाहते हैं, उन्हें नयी तालीम को सच्चे अर्थों में लागू करना चाहिए और जो लोग उस क्रान्ति को नहीं चाहते, उन्हें नयी तालीम के खतरनाक स्वरूप से सावधान होना चाहिए। यह होगा नयी तालीम के प्रति न्याय। नयी तालीम के आवरण के नीचे पुरानी तालीम को चलाना अनैतिकता की चरम सीमा है। नयी तालीम के लिए अपनी मान्यताओं और धारणाओं में क्रान्ति लाने की जरूरत है। जो आचार्य, संस्थाओं के संचालक और विद्यार्थियों के अभिभावक बच्चों को बाबू और नौकर बनाना चाहते हैं, उन्हें भूल कर भी नयी तालीम की शरण नहीं लेनी चाहिए। नयी तालीम तो आत्मोद्योगी युवक-युवतियों का निर्माण कर सकती है। उसको प्राप्त करने वाले प्रशासक और व्यवस्थापक भी अपने माता-पिता की विपुल धन-संग्रह की इच्छा को पूर्ण नही करेंगे। कैसी दयनीय स्थिति है समाज की, कि समाज का आर्थिक स्तर एकदम नीचा हो और उसकी सेवा का दम भरने वाले सरकारी नौकर और मंत्रिमंडल के लोग ऊँचे आर्थिक स्तर पर रहना तथा लम्बे-लम्बे वेतन पाना अपना अधिकार और धर्म मानते हों!

साम्ययोग की सिद्धि

आज समाज में शिक्षा और व्यक्तिगत समृद्धि का अभिन्न नाता माना गया है। यह एक अनैतिक आदर्श है। नैतिकता की दृष्टि में शिक्षा और सामाजिक समृद्धि तथा समानता का गठबन्धन होना चाहिए। जो लोग समाज के कोष में से अधिक सम्पत्ति अपने लिए लेकर दूसरों के लिए पीड़ा, रोग, दरिद्रता और दुःख की निधियाँ ही छोड़ते हैं, उन्हें किसी भी अर्थ में शिक्षित और सभ्य नहीं माना जा सकता। समाज का गणित बहुत ही सरल और स्पष्ट है। एक परिवार में पाँच व्यक्ति हैं, और परिवार की आय पचास रुपया प्रति मास है, तब परिवार के प्रत्येक सदस्य का यह धर्म है कि वह अपने ऊपर किसी भी प्रकार दस रुपये से अधिक व्यय का औसत न पड़ने दे। ठीक इसी प्रकार बृहत्तर मानव-समाज एक विशाल परिवार है—यह है हमारा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का दिव्य आदर्श। इस बृहत् परिवार के भीतर प्रत्येक व्यक्ति को यह सावधानी और चौकीदारी बरतनी चाहिए कि वह समाज के भीतर अपने ऊपर प्रति व्यक्ति औसत आय से अधिक सम्पत्ति का व्यय न कर पाये। नयी तालीम हमें ऐसा सतर्क मानव बनाती है, जो स्वयं अपनी पहरेदारी करे कि मैं अपने 'आनुपातिक हिस्से' से अधिक न लूँ। जब ऐसे प्रबुद्ध मानव का निर्माण होगा, तभी हम साम्य की सिद्धि कर सकेंगे। नयी तालीम व्यक्ति को यह सिखाती है कि उसे दूसरे किसी भी मनुष्य के साथ होड़ या प्रतियोगिता नहीं करनी चाहिए, उसे अपना भौतिक पोषण बुद्धि और शरीर के श्रम द्वारा प्रकृति के अक्षय भंडार से प्राप्त करना चाहिए।

नयी तालीम की शिक्षण-पद्धति

नयी तालीम की अपनी एक शिक्षण-पद्धति भी है, जिसे "समवाय-प्रणाली" कहते हैं। कुछ लोग समवाय पद्धति को ही नयी तालीम मानते हैं, यह एक गहरी भ्रान्ति है। शिक्षण-पद्धति तो एक प्रणाली है, उसके द्वारा कोई भी शिक्षण दिया जा सकता है। मूल वस्तु है—शिक्षण का स्वरूप और लक्ष्य। जहाँ तक समवाय पद्धति का प्रश्न है, यदि विशुद्ध रूप में इसका अनुसरण किया जाय, तो यह निश्चित रूप से समूची शिक्षा को जीवन-शिक्षण की दिशा में प्रवर्तित कर देगी। यह पद्धति पदार्थ-पाठ पर आधारित है। बालक को उसके जीवन और वातावरण के आधार पर उसकी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए। यह शिक्षा मूलतः आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होनी चाहिए। उद्योगी मानव के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि उसे शास्त्रीय ज्ञान के साथ व्यावहारिक अनुभव या मिस्त्रीय ज्ञान और मिस्त्रीय ज्ञान के साथ शास्त्रीय ज्ञान भी मिले। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। अतः प्रत्येक शिक्षण-शाला एक उद्योग-शाला होनी चाहिए जहाँ उद्योग सीखने का शिक्षण विद्यार्थी को प्राप्त हो। शिक्षणकाल में विद्यार्थी का जीवन कड़ा, संयमित, अनुशासित और शिस्त-बद्ध होना चाहिए। इस काल में उसे विलासितापिय और मृदुगात नहीं बनने दिया जाय। वस्तुतः विद्यार्थी-काल में ही व्यक्ति अपने जीवन के भावी संघर्ष के लिए तैयार होता है, अतः उसे उसकी कठोरता का अनुभव क्षमता के अनुसार होना ही चाहिए, अन्यथा वह व्यक्ति अपने गृहस्थ-जीवन में पहुँच कर निरुद्योगी सिद्ध होगा। उद्योग ही स्वावलम्बन की विद्या है। १६ वर्ष की आयु तक विद्यार्थी के भीतर इतनी क्षमता आ जानी चाहिए कि वह अपने जीवन के भौतिक और आध्यात्मिक पहलुओं से भली भाँति परिचित हो जाय तथा उद्योग के द्वारा अपना व अपनी शिक्षा का पूरा व्यय निकाल सके। इसके बाद उसे अपने जीवन का उच्च-शिक्षण तथा उद्योग का उच्च-प्राविधिक ज्ञान (हायर टैक्नीकल नॉलेज) और व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करना चाहिए—यहाँ तक कि २० से २२ वर्ष की आयु के बीच में उसमें आर्थिक दृष्टि से एक छोटे-मोटे परिवार का भार उठाने की सामर्थ्य आ जानी चाहिए। अगले ३-४ वर्षों में अपने अतिरिक्त उत्पादन द्वारा वह उत्पादन की सामग्री, सरंजाम आदि जुटा कर २५ वर्ष की आयु में गृहस्थ-जीवन के भीतर प्रविष्ट हो। यही हमारे शास्त्रों में ब्रह्मचर्याश्रम की साधना बतायी गयी है। इस प्रकार ऐसे प्रबुद्ध जनों का निर्माण होगा, जो स्वावलम्बी, आत्मनिष्ठ एवं समाज-सेवी होंगे।

...सर्व-सेवा-संघ के अलावा हम दूसरी भी ऐसी रचनात्मक संस्थाओं को मान्य करें, जिनमें त्रिविध निष्ठा हो। ऐसी सब संस्थाए अपने काम के साथ-साथ भूदान का काम करेंगी। हमारे घर में सोने के लिए एक, भोजन के लिए एक और अनाज रखने के लिए एक कोठरी रहती है। परंतु क्या आकाश के लिए कोठरी होती है? आकाश के लिए कोठरी नहीं रहेगी, हर कोठरी में आकाश रहेगा। उसी तरह से भूदान के लिए कोई स्वतंत्र संस्था नहीं होगी। हर घर और हर संस्था उसकी है।

गाँधीग्राम, ३०-११ —विनोबा

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१४ दिसंबर सन् १९५६

लोकनागरी लिपि

अंबर-प्रचार में सावधानी !

(वीनोबा)

खादी-बोर्ड अंबर चरखों की संख्या बढ़ाने की तरफ ध्यान दे रहा है, ताकी लोगों का अुस पर वीश्वास बैठे। अुधर सरकार बेकारी मीटाने के काम में भी अंबर का अुपयोग करना चाहती है। अीन दोनों में जो अंतरा है, वह ध्यान में रख कर योजना की जायेगी, तो चरखे भी खूब चलेंगे और बेकारी भी मीटेगी। यह अंतरा क्या है और अुसका अुपाय भी क्या है, हमने देख लीया है। हम चरखे की संख्या बढ़ाना चाहते हैं या बेकारी मीटाने के लीअे अेकदम चरखे चलाना चाहते हैं, तो संभव है की चार-छह महीने में हजारों चरखे चले। परंतु अगर लोगों को यह आदत पड़ गयी की 'हम चरखे तो चलायेंगे, पर अुसका सूत बेच देंगे, फीर सरकार अुस सूत का चाहे जो करे, हमें पैसा मील जायगा,' तो अीससे खादी-वीचार आगे नहीं बढ़ेगा, अेक हद तक आगे बढ़ने पर वह रुक जायेगा। अीसलीअे जैसे कीसान अनाज का अेक अंश पास रख कर बाकी बेचता है, अुसी तरह खादी-काम में कातने वाला और बुनने वाला अपने अुपयोग के लीअे जीतना चाहे रखे और फीर बाकी का बेचे। आज कातने वाले को औसत तीन-साढ़े-तीन आने मीलते हैं। अंबर चरखे से तो दुगुना मील जायेगा। अुस हालत में अगर वह सीर्फ पैसा लेगा और खुद खादी नहीं पहनेगा, तो पेड़ की जीस शाखा पर हम खड़े हैं, अुसी शाखा को काटेंगे और हम ही गीर जायेंगे। जो कातने और बुनने वाला सीर्फ पैसे के लीअे कातेगा-बुनेगा, वह दोनों धंधे को ही तो काटता है !

दूसरे, खादी का मुख्य ग्राहक-वर्ग गांव के ही लोग हैं, क्योंकी सौ में से सीर्फ सोलह लोग शहर में रहते हैं और चौरासी गांवों में रहते हैं। अीसलीअे अुसका कपड़ा पहले वहीं अीस्तेमाल कीया जाना चाहीअे। मैं चाहूँगा की सरकार या खादी-बोर्ड की तरफ से जो मदद देनी है, वह अुन्हीं को दी जाय, जो अपने कपड़े के लीअे सूत कातेंगे और गांव में ही बुनवा लेंगे।

अगर मैं सरकार हूँ, तो अुसकी ओर से जाहीर करूँगा कीः (१) हर अेक को कताअी सीखाने की जीम्मेवारी सरकार की है और बीना लीखना, पढ़ना और कातना सीखे, कोअी ग्रामीण शीक्षीत नहीं माना जायगा, (२) सरकार आवश्यकतानुसार कीस्तों पर चरखे मुहैया करेगी और (३) कम-से-कम बारह गज की बुनाअी हर ग्रामीण के लीअे मुफ्त होगी। वस्तुतः हम बुनाअी का राष्ट्रीयकरण करके अुसको अेक सेवा ही बनाना चाहते हैं।

(पलनी, मदुरा, १९-११-'५६)

तंत्र-मुक्ति के बाद

(विनोबा)

हमने भूदान-समितियाँ खत्म करने का जो निर्णय किया है, उसके तीन परिणाम आ सकते हैं :—(१) आन्दोलन सबका सब खत्म हो जायगा। जो सबका काम है, वह कोई नहीं करेगा। (२) सब लोग उठ कर खड़े हो जायेंगे और काम में लगेंगे। वैसे तो हर चीज ईश्वर की मर्जी पर निर्भर रहती है, फिर भी उसने कुछ अंश हम पर सौंपा है। परंतु ये दोनों बातें सर्वथा ईश्वर की मर्जी पर निर्भर है। यह भी संभव है कि अब किसी को काम की प्रेरणा ही नहीं मिलेगी, एक नाटक हो जायगा। बाबा बेवकूफ है, इसलिए घूमता रहेगा, बाकी कुल काम खत्म होगा। ईश्वर चाहेगा, तो यह हो सकता है और वह चाहेगा तो काम में भी सब लग जायँगे। (३) तीसरा परिणाम यह भी आ सकता है कि जो रचनात्मक काम करने वाले हैं, चाहे वे किसी पक्ष के अंदर हों या बाहर हों, उनकी आत्मा एकदम जाग जायगी। यहाँ पर गांधी-ग्राम में एक संस्था चलती है। अभी तक ऐसे लोग समझते थे कि भूदान का काम करने के लिए भूदान-समिति है और समितिवाले हमारी मदद माँगते हैं, तो हम देते हैं। लेकिन अब कोई समिति उनके पास मदद माँगने नहीं जायेगी, तो वे समझेंगे कि अब तो हम पर जिम्मेवारी आयी है। अगर रचनात्मक काम करनें वाले ऐसा नहीं समझेंगे, तो वे रचनात्मक काम की जो मूल श्रद्धा है, उसीको काटेंगे। इसलिए अब वे लोग जाग जायँगे और अपना अपना जो भी काम करते हों, उसके साथ-साथ भूदान का भी काम करेंगे। नयी तालीमवाले सोचेंगे कि हम गाँव-गाँव में नयी तालीम शुरू करना चाहते हैं, परंतु जब तक आज की विषमता नहीं मिटेगी, तब तक गाँव के सब बच्चों को समान पोषण और रक्षण नहीं मिलेगा। उस हालत में उन्हें तालीम भी कैसे दी जा सकती है ? इसीलिए आर्य-नायकम्जी हमारे साथ पिछले ६-७ महीनों से घूम रहे हैं। उसी तरह खादी वाले भी जानते हैं कि भूदान-आन्दोलन इतने बढ़ने पर गिर जायगा, तो खादी भी गिर जायगी। आज खादी को सरकार की तरफ से मान्यता इसीलिए मिली है कि इन ४-५ साल में सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठा बढ़ी है। अगर भूदान-आन्दोलन इतना ऊँचा चढ़ने पर गिर जायगा, तो सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठा भी खत्म हो जायगी। फिर सरकार कहेगी कि 'हमने खादी को मदद दी, परंतु उसमें पैसा बहुत खर्च होता है और काम थोड़ा होता है, सो यह कोई होने-जाने वाली चीज नहीं है, इसलिए कहीं बिल्कुल बेकारी हो, तो वहाँ भले यह चले, परंतु बाकी तो मिलें ही चलेंगी।' फिर सरकार के आधार से जो खादी-काम चलता है, वह खत्म हो जायगा। इसलिए अब गांधी-विचार में मानने वाले कुल लोगों की आत्मा जाग जायगी।

'आज तक भूदान-समितियों को ऊपर से जो मदद और तनख्वाह मिलती थी, बाबा ने वह सब रस्सा काट डाला, तो इसमें बाबा का हम पर अत्यंत प्रेम ही हुआ है,' ऐसा जब आपको लगेगा, तब आप इस विचार को समझेंगे। परंतु आप अगर यह समझें कि बाबा का हम पर कोप हुआ है, तो कहना होगा कि आप विचार को समझे ही नहीं हैं। अब आप बच्चे नहीं रहे हैं। सतत ऊपर से हिदायतें और पैसा आने पर काम चलेगा, तो आपकी शक्ति नहीं बढ़ेगी। उससे आपकी शक्ति एक हद तक ही बढ़ी। इसलिए ईश्वर की बहुत कृपा हुई है कि ईश्वर ने हमें यह विचार सुझाया। इससे कई सवाल पैदा होंगे, जैसे दानपत्र कहाँ रखे जायँ, जानकारी कहाँ से प्राप्त की जाय, संपत्ति-दाताओं को कहाँ से हिदायत मिले, आदि। परंतु जितने ज्यादा सवाल पैदा होंगे, उतने ज्यादा विचार सूझेंगे।

अभी कृष्णदास (गांधी) ने हमारे सामने तमिलनाड के खादी-कार्य के बारे में एक योजना रखी। जगह-जगह पर उनके जो खादी-भंडार होंगे, वहाँ पर काम करने वाले सेवक अब सिर्फ खादी का नहीं सोचेंगे, बल्कि उसके साथ साथ ग्रामोद्योग, भूदान के साहित्य का प्रचार आदि सबकी ओर ध्यान देंगे। हमने उनसे कहा है कि कम-से-कम हर जिले में ऐसा एक केन्द्र हो। वहीं पर दानपत्रों का हिसाब रखा जायगा, साहित्य रखा जायगा।

हमारे कार्यकर्ता के लिए सर्व-सेवा-संघ का वह केन्द्र याने एक मातृस्थान होगा। वहाँ से उसे सलाह मिलेगी। लेकिन हमारा कार्यकर्ता बिल्कुल मुक्त रहेगा। अगर वह हिसाब आदि में बंधा रहेगा, तो फिर वह सिंह का बच्चा नहीं रहेगा। उसे दिन के २४ घंटे और महीने के ३० दिन भूदान में ही लगाने हैं।

गांधीग्राम, ३०-११

---

www.vinoba.in

नयी तालीम की तीन आधार-शिलाएँ

(विनोबा)

नयी तालीम के पीछे एक निष्ठा है, जो अहिंसा की निष्ठा है। आज दुनिया में ऐसा कोई शख्स नहीं है, ऐसा कोई समाज नहीं है, जो अहिंसा को पसंद न करता हो, क्योंकि यह चीज वैसी ही मीठी है। परन्तु जहाँ व्यवहार का ताल्लुक आता है, वहाँ लोगों की श्रद्धा अहिंसा पर नहीं बैठती है। लोगों के हृदय में अहिंसा के लिए प्रेम जरूर है, परंतु आज भी अंतिम श्रद्धा अगर है, तो हिंसा पर ही। माता-पिता बच्चों को समझाते हैं। पर यदि वे नहीं समझे, तो धमकाते हैं, कभी पीटते भी हैं। उस पीटने में प्रेम होता है, उनका भला हो, ऐसी भावना भी होती है, परंतु समझाने पर भी जो नहीं समझ रहा, उसको समझाने के लिए अचूक साधन अगर कोई है, तो ताड़न है! यह विचार आज दुनिया में जीवन की सब शाखाओं में है। घर में यह ताड़न है, तो सरकार में दंड। समाज में बहिष्कार है, तो आंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए सेना। घर से लेकर आंतर्राष्ट्रीय- मामले तक आखिरी दारोमदार हिंसा पर है।

अहिंसा की श्रद्धा का तरीका

परंतु अहिंसा की जहाँ श्रद्धा होती है, वहाँ बच्चा नहीं समझ सका, तो उसको अधिक प्रेम से; उससे भी नहीं समझ सका, तो और अधिक सौम्य इलाज से समझाना होता है। इस तरह सौम्यतम तरीके तक जाना होता है। जो काम मारने-पीटने से नहीं हो सकेगा, वह समझाने से; समझाने से जो नहीं हो सकेगा, वह प्रेमपूर्वक सेवा करने से और इससे भी वह नहीं हुआ, तो उसके लिए प्रेमपूर्वक अधिक त्याग करने से वह जरूर होगा। इस तरह का परिणाम लाने के लिए उत्तरोत्तर सौम्य उपाय और आखिर में सौम्यतम उपाय तो जरूर कारगर होगा ही, ऐसी श्रद्धा का नाम अहिंसा है। आज भूदान के लिए घूम-घूम कर प्रेम से समझाते हैं। इसका असर न हुआ, तो लोग पूछते हैं, कोई उग्र कदम उठाना होगा? उससे भी न हुआ, तो और भी तीव्रतम कदम की बात, अहिंसा की मर्यादा में रह कर, वे सोचते हैं। अहिंसा की मर्यादा याने किसी को मारना-पीटना नहीं। परंतु इस काम के लिए अधिकाधिक तीव्र उपाय करने पड़ेंगे, ऐसा ही दिमाग सोचता है। हम इसीको हिंसक चिंतन मानते हैं। यह अहिंसा का सोचने का ढंग नहीं है। शस्त्रास्त्रों में यही चलता है। पर अहिंसा के लिए भी तीव्र-तीव्रतर और तीव्रतम उपाय का ही सोचते चले जायँगे, तो वह नाममात्र की अहिंसा होगी, विचार की नहीं। इसलिए अहिंसा में सौम्य, सौम्यतर और सौम्यतम की तरह ही सोचने का ढंग होगा।

शिक्षण का मूल सिद्धांत

कर्मपरायण लोग हमेशा प्रेम से समझाते हैं, पर वहाँ सामने वाला नहीं समझा कि आवाज एकदम ऊँची हो जाती है। इसका नाम है, हिंसा की प्रक्रिया। पर प्रेम से समझाने से भी परिणाम नहीं आया, तो तीव्रता से समझाने से कैसे आयेगा? बिलकुल नहीं आयेगा, ऐसा समझना चाहिए। इसलिए हमारा प्रेम यदि नाकाफी होता है, तो अधिक प्रेम करने की इच्छा होनी चाहिए।

यह चीज हम सारे समाज के लिए कह रहे हैं। राजकारण, व्यापार-व्यवहार, सामाजिक क्षेत्र, कुटुम्ब, सभी में यह लागू होगा। यह शिक्षण का मूलभूत सिद्धान्त है। अहिंसा याने केवल न मारना-पीटना या केवल शस्त्रत्याग नहीं है। वह तो एक निगेटिव (अभावात्मक) वस्तु हो जाती है। अहिंसा के चिंतन की प्रोसेस (प्रक्रिया) ही भिन्न है, यह बात हमें निरंतर ध्यान में रखनी चाहिए।

जीवन-रहस्य

दूसरे, जिसे हम "हम" कहते हैं, उसमें कुछ तो विचार का और कुछ शरीर का अंश होता है। इन दोनों का मिलन करते हैं, तो हमारा कर्तव्य स्पष्ट हो जाता है। हमारे हाथ, पाँव, कान, आँख की शक्ति की एक मर्यादा है, इसलिए हमारा कर्तव्य-क्षेत्र शरीर के आसपास होगा। उसी तरह जीवन का सारा ढाँचा आसपास के लोगों की सेवा के ख्याल से होना चाहिए। यह सेवा का एक सूत्र हुआ। विचार में तो हम अत्यंत दूर देख सकते हैं। जमीन पर बैठ कर आसमान का चिंतन कर सकते हैं। चिंतन की शक्ति बहुत व्यापक होती है। इसलिए चिंतन से हमको विश्वमानव बनना चाहिए। इन दोनों में विरोध नहीं आना चाहिए। हम नजदीकवाले को ऐसे ढंग से सेवा करेंगे कि दूरवाले को कुछ भी नुकसान न हो, बल्कि फायदा ही है। विश्वहित से अविरोध, आसपास के क्षेत्र की सेवा, यह है अपने जीवन का रहस्य। हमारी जो तालीम होगी, वह इस तरह की दुहरी शक्ति से पूर्ण होगी। विचार में कहीं भी संकीर्णता और संकुचितता न हो, लेकिन प्रत्यक्ष आचरण और कृति की योजना में आसपास के क्षेत्र की तरफ अनन्य निष्ठा हो। बुद्ध-ईसा की ऐसी ही मिसालें हैं। एक का सेवाक्षेत्र बिहार, तो दूसरे का पैलेस्टाईन था, पर उनके हृदय में तो विश्वप्रेम और चिंतन में विश्वकल्याण की ही बात थी। नयी तालीम का भी यही मंत्र है। विचार में व्यापकता और कर्मयोग में विशिष्टता, नयी तालीम का दूसरा विचार है।

"ब्रेड लेबर!"

तीसरा विचार बहुत बड़ा है। वह अगर हम नहीं समझते हैं, तो नयी तालीम में कर्म के लिए इतना आग्रह क्यों है, यह भी समझ में नहीं आयेगा। आज हम दुनिया के तरह-तरह के काम करते हैं। कोई वकील है, तो कोई व्यापारी, प्रोफेसर, मंत्री, किसान आदि हैं। ये सारे काम समाज के लिए मुफीद हैं। इन कामों को जो ईमानदारी से करेगा, वह अच्छा और योग्य लोकसेवक है, ऐसा आज माना जायगा। इसमें दोष भी नहीं है। परन्तु नयी तालीम केवल आज का समाज ध्यान में लेकर सेवा करने वाली नहीं है। उसे जो समाज आगे बनाना है, उस समाज के आचरण का एक बड़ा सूत्र यह है कि हर किसीको अपने शरीर के आहार के लिए शरीर-परिश्रम करना चाहिए। दूसरे-तीसरे बौद्धिक काम करके शरीर को खिलाना उत्तम धर्म, उत्तम कार्य नहीं है। शरीर का पोषण शरीर-परिश्रम से करना चाहिए। इसीको ईसा ने 'ब्रेड लेबर' (पसीने की कमाई) कहा है और भगवद्गीता ने "यज्ञ।" इस तत्त्व को जो पूरी तरह से कबूल नहीं करेंगे, वे नयी तालीम को भी पूरी तरह से कबूल नहीं करेंगे। किसी क्रिया के, काम के जरिये शिक्षा देना तो शिक्षण-पद्धति का एक बिलकुल ही मामूली विषय है। पर हम अपनी आजीविका शरीर-परिश्रम से प्राप्त नहीं करते हैं, तो दूसरों के कंधों पर बैठते हैं। तब हम हिंसा से मुक्त नहीं हो सकते। नयी तालीम के मूल में यही विचार है। वह 'ब्रेड लेबर' के सिद्धांत पर आधार रखती है। हमारा अब तक का जीवन और अब यह पैदल यात्रा भी ऐसा ही 'ब्रेड लेबर' रहा है।

इससे हमारी बुद्धि की शक्ति भी बहुत बढ़ी है, कम नहीं हुई है। हम यह नहीं कहना चाहते कि जो रातदिन केवल शरीर-परिश्रम करेगा, उसकी बुद्धि तीव्र होगी। किसी चीज में अतिशयता आ जाती है, तो विकास रुकता है। परंतु जिस जीवन में शरीर-परिश्रम का अच्छा अंश होगा और उसके साथ-साथ चिंतन होगा, तो वहाँ अच्छा बुद्धिविकास होता है। आज ६२ साल की उम्र में हमारी स्मरण-शक्ति बचपन से बहुत-ज्यादा तीव्र हुई है। तो कर्म के बिना ज्ञान नहीं हो सकता, इसलिए कर्म के जरिये ज्ञान दिया जाय, इतना ही केवल नयी तालीम में नहीं है, परंतु शरीर-परिश्रम से जीविका हासिल करनी चाहिए, यह बड़ा सिद्धान्त मान्य करके उसके आधार पर नयी तालीम बनी है।

(गांधीग्राम के नयी तालीम के शिक्षकों के साथ, ३०-११-'५६)

संपत्तिदान में से हजारों कार्यकर्ता खड़े किये जा सकते हैं। भारत के नागरिकों को तो लाख से कम भाषा बोलनी ही नहीं चाहिए। हमने अभी मदुरा शहर वालों से कहा कि मदुरा में ४ लाख जनसंख्या है, तो वहाँ से हमें, आरंभ के लिए, २४ लाख रुपये का संपत्तिदान मिलना चाहिए। हर मनुष्य के पीछे साल भर में छह रुपये याने हर रोज का पैसा। हमने उन्हें समझाया कि संपत्तिदान के जो तीन उपयोग हमने बताये हैं, उनमें सबसे प्रथम उपयोग कार्यकर्ताओं को खड़ा करने में होना चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि संपत्तिदान में से ९० प्रतिशत संपत्ति का उपयोग भूमिहीनों को मदद देने में होगा। परंतु फिर भी संपत्तिदान का प्रथम कर्तव्य है, कार्यकर्ताओं को खड़ा करना, क्योंकि कार्यकर्ता ही नहीं होंगे, तो लोगों के पास जायेगा कौन, जमीन माँगेगा कौन? संपत्तिदान का दूसरा उपयोग भूदान का साहित्य सस्ता करने में होगा। संपत्तिदान के रूप में एक अखंड बहता हुआ स्रोत आपके हाथ में आया है।

(गांधीग्राम, मदुरा, ३०-११) —विनोबा

www.vinoba.in

शान्तिदल : समय की सबसे बड़ी माँग

(हरिभाऊ उपाध्याय)

एक वयोवृद्ध आदरणीय नेता का कहना है कि अनशन के लिए बहुत योग्यता और अधिकार चाहिए तथा अनशन करने वालों की एक टुकड़ी या सेना नहीं बनायी जा सकेगी। सामूहिक अनशन उचित न होगा। बेशक इनकी पहली बात में बहुत वजन है, जब कि दूसरी पर अधिक चर्चा होने की आवश्यकता है। योग्यता और अधिकार की आवश्यकता को मान कर हमने ही यह तजवीज की है कि शांति-दल के दो पक्ष या भाग किये जायँ—एक निवारक, दूसरा रक्षक। निवारक में एक तरह की योग्यता अपेक्षित होगी, जब कि रक्षक दल में दूसरी प्रकार की। निवारक-दल प्रचार, खोज, छानबीन, समझौता-सुलह आदि प्रकार के रचनात्मक काम करेगा—रक्षक दल प्रत्यक्ष मोर्चे पर पहुँच कर स्वपीड़न या स्वमरण के द्वारा उपद्रव और अशांति को रोकेगा। इस दूसरे दल में चोटी के, अनुभवी, प्रभावशाली नेता होने चाहिए। जितनी अधिक सेवा उनकी होगी, जितना ही अधिक ममत्व जनता से उनका होगा, तन्मयता होगी, उतना ही अधिक कारगर उनका स्वपीड़न या स्वमरण होगा। स्वपीड़न या स्वमरण का अर्थ यह नहीं है कि हम यों ही आवेश में आकर बिना आगा-पीछा सोचें जान झोंक दें। जान बहुत कीमती चीज है और अनिवार्य होने पर ही जान देना उचित हो सकता है। जान की बाजी तभी लगायी जानी चाहिए, जब उसके पहले के सब शांतिपूर्ण हथियार बेकार साबित हो रहे हों। इसलिए आवश्यक है कि निवारक तथा रक्षक, दोनों दलों के लिए हम एक कार्यविधि बनावें तथा व्यवस्था, विधि और पद्धतिपूर्वक सारा काम किया जाय।

सामूहिक अनशन

यदि एक व्यक्ति अमुक अवस्था में अनशन का अधिकारी समझा जा सकता है, तो अनेक व्यक्ति एकसाथ ऐसे अधिकारी क्यों न समझे जायँ? यदि एक व्यक्ति एकांत में प्रार्थना कर सकता है तो अनेक व्यक्ति समाज में सामूहिक रूप से क्यों नहीं कर सकते? हाँ, यदि हमने उनकी योग्यता और अधिकार की ओर ध्यान नहीं दिया, तब तो अवश्य वह असफल और अनर्थकारी भी हो सकता है, परन्तु योग्यता और अधिकार के अनुसार छाँट-छाँट कर यदि सैनिक या सेनापति लिये गये हैं, तो फिर उसमें क्या आपत्ति या कठिनाई हो सकती है? शस्त्र-सेना और शांति-सेना, दोनों में अधिकार या पात्रता, पूर्वतैयारी—रचनात्मक काम-प्रशिक्षण, कवायद, अनुशासन, व्यवस्था, पद्धति, आयोजन, सामूहिक क्रियाकलाप, पर्यवेक्षण, सब समान रूप से आवश्यक हैं। फर्क यही कि शस्त्र-सेना दूसरों को मारती है, यह शांति-सेना खुद ही मरती है। अतः यदि शस्त्र-संचालन, उसका अभ्यास और प्रयोग सामूहिक रूप से किया जा सकता है, तो इस शांति-सेना का कार्य सामूहिक रूप से क्यों न चल सकना चाहिए? अलबत्ते हमें उसका शास्त्र, विधि और नियमोपनियम बनाने होंगे, जो कठिन नहीं हैं और प्रयोग तथा व्यवहार के अनुभव से उनमें घटती-बढ़ती की जा सकती है।

वातावरण बनाने की आवश्यकता

परन्तु जब हम इसे अपने तथा समाज-जीवन का एक अंग बना लेंगे या मान लेंगे, तब वह हमारी दिनचर्या बन जायगी। निःशस्त्र सेना का कार्य, उपद्रवियों के पत्थर, लाठी आदि के वार सहना, झेलना, अंग-भंग होने देना, चोट खाकर या अनशन करके मर जाना—आदि कार्य नित्य जीवन के अंग बन जायँगे। आज शांतिदल और उसके क्रियाकलाप की कल्पना हमें अजीबो-गरीब लगती है, लेकिन आगे चल कर अभ्यास और संसर्ग से वही हमारा नित्य जीवन बन जायगा। इसके लिए एकनिष्ठा, प्रयोग, प्रयत्न, अभ्यास और अथक परिश्रम की आवश्यकता है। ऐसा करने के लिए हमें अपने कुछ रूढ़ संस्कारों को बदलने की, लीक में से निकलने की, नयी परिस्थितियों के नये इलाज खोजने की शोधक बुद्धि की आवश्यकता होगी। प्रयोगकर्ता को साहस और खतरा मोल लेने, असफलता की जोखिम उठाने की प्रवृत्ति रखनी होगी। असफलता या विपरीत परिणाम निकलने की अवस्था में, प्रयत्न छोड़ देने की अपेक्षा, आत्म-निरीक्षण द्वारा अपनी कसर और भूल को पकड़ना होगा तथा उससे सबक लेना और फिर आगे कूच करना होगा। इस तरह कुछ वर्षों के प्रयोग और अनुभव से हम इसका समुचित शास्त्र बना लेंगे। जितना समय, शक्ति, धन हमें शस्त्र-बल को संगठित करके आज की उन्नत अवस्था में लाने में लगा है, उसके $\frac{1}{10}$ में हम शांतिसेना को सुसंगठित और सुसज्जित कर लेंगे।

विनोबाजी का मार्ग-दर्शन

पहले हम यह विचार करें कि यह कार्य सरकारी स्तर पर हो या गैर-सरकारी? गैर-सरकारी स्तर पर करने में तो कोई कानून, विधान की रुकावट है ही नहीं, कोई भी जिम्मेदार व्यक्ति या संस्था अपनी जिम्मेदारी पर ऐसा दल कायम कर सकती है। इस समय विनोबा से बढ़कर कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जिसके तत्त्वावधान में ऐसा दल कायम हो सके या चल सके। प्रत्यक्ष जिम्मेदारी कोई दूसरा योग्य तथा अधिकारी पुरुष ले, परन्तु विनोबा के मार्ग-दर्शन में। उस व्यक्ति का चुनाव या तो विनोबा खुद करें, या यदि कोई व्यक्ति स्वयं स्फूर्ति से इस काम को उठावे, तो विनोबा के आशीर्वाद उसे प्राप्त हों। 'सर्व-सेवा-संघ' की अनेक प्रवृत्तियों में यह भी एक प्रवृत्ति हो सकती है और 'सर्व-सेवा-संघ' का कोई प्रधान व्यक्ति इसकी जिम्मेदारी ले सकता है। कांग्रेस, प्रजासमाजवादी पक्ष, भारत-सेवक-समाज आदि भी इसमें पहल कर सकते हैं। सब दलों की बैठक भी इसके लिए बुलाना जरूरी है।

दंगे रोकने का एक और उपाय

उपद्रव रोकने या न होने देने का एक यह भी उपाय है कि जो दल, संस्थाएँ, संघ या मंडल इस विचार को मानते हों कि समाज में शांति-रक्षा आवश्यक है, हमें अपने मतों का प्रचार करने के लिए अपनी योजनाएँ चलाने के लिए एक-दूसरे पर जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए, कानून और डंडों को हाथ में नहीं लेना चाहिए, वे सब अपने-अपने विधानों में 'शांतिमय साधनों से काम करने की' प्रतिज्ञा करें। और उनके जो सदस्य उसका भंग करें, उनके खिलाफ अनुशासन की कार्रवाई की जाय, या उन संगठनों के नेता खुद उपद्रवों के अवसरों पर पहुँच कर शांतिमय साधनों से उन्हें रोकें या असफल होने की आवश्यकता में प्रायश्चित्त के तौर पर उपवास करें। इसका बहुत अच्छा प्रभाव अनुकूल दिशा में, उसके अनुयायियों पर और उस संगठन के सदस्यों पर पड़ेगा।

इसके लिए यह आवश्यक होगा कि ऐसे उपद्रवों के बाद, हर दल और संगठन के नेता इसका पता लगावें कि उनका कोई सदस्य तो उसमें शामिल नहीं था। यदि रहा हो, तो उसके बारे में पूर्वोक्त प्रकार से समुचित कार्रवाई फौरन करें। यदि वे ऐसा नहीं करते तो या तो वे अपने संगठन के प्रति वफादार नहीं हैं, शांति-रक्षा या शांतिमय साधनों से काम लेने की उनकी प्रतिज्ञा महज एक ढकोसला है।

प्रतिज्ञा-पत्र

शांति-दल के सदस्य स्वयं तो एक प्रतिज्ञापत्र भरेंगे ही, जिसके अनुसार वे शांतिमय साधनों से उपद्रवों का मुकाबला करने और आवश्यकतानुसार अपना प्राण तक देने का निश्चय करेंगे, परन्तु वे अपने-अपने हलके के नागरिकों से भी इस आशय का एक प्रतिज्ञापत्र भरावेंगे कि हम खुद न तो कोई हिंसात्मक उपद्रव करेंगे, न उसमें भाग लेंगे। ऐसे प्रतिज्ञापत्र भराना शांति-दल के लिए बहुत अच्छा रचनात्मक काम होगा। यदि यह काम लगन से और व्यवस्थापूर्वक किया गया, तो उपद्रवों के होने की आशंका या संभावना बहुत कम रह जायगी।

भारत में जैनियों और वैष्णवों का बड़ा अहिंसाप्रिय समाज है। मैं तो इन अहिंसाप्रिय समाजों से इस शांति-दल में बहुत आशा रखता हूँ। इनके अलावा उन समाजों या जातियों से भी इस दल में हर प्रकार की सहायता की आशा की जा सकती है, जो स्वभाव से क्षत्रिय हैं, अर्थात् मरना-मारना जिनके लिए बायें हाथ का खेल रहा है। मारने की शिक्षा जिन्होंने पीढ़ियों से पायी है, उन पर मरने के संस्कार नये सिरे से डालने की आवश्यकता नहीं है। जब मारने—युद्ध करने निकलते हैं, तो वे मरने की तैयारी पहले से ही किये होते हैं। वह संस्कार आज तक उनका चला आ रहा है। हाँ, मारने का संस्कार या स्वभाव उन्हें छोड़ना पड़ेगा। मारने की विद्या भूलनी है, जो बहुत मुश्किल नहीं है। मैंने ऐसी वीर जातियों के व्यक्तियों से—राजपूत, सिक्ख, मुसलमान से—बातचीत की है और मुझे यह जान कर आश्चर्य और आनन्द हुआ है कि उन्होंने बड़ी जल्दी शांति और शांतिदल का महत्त्व समझ लिया है और अपनी सेवाएँ अर्पित करने की उत्सुकता प्रकट की है।

अहिंसा-प्रिय जातियों की जिम्मेदारी

इस काम में निश्चय ही अहिंसाप्रिय जातियों की जिम्मेदारी अधिक है। उन्होंने तो मारने की विद्या और कला छोड़ दी है। उसे कनिष्ठ या निषिद्ध मान कर इन जातियों ने छोड़ दिया, यह अच्छा किया। परन्तु उसके मुकाबले का दूसरा बल, आत्म-पीड़न या मरण का नहीं अपनाया। अब उसे अपनाने की जरूरत है। मारण-बल छोड़ दिया, तो मरणबल प्राप्त करना चाहिए। तभी इन जातियों और समाजों में अहिंसा जीती-जागती होगी और रहेगी, नहीं तो आज की तरह निर्बल और दयनीय बनी रहेगी। लेकिन मुझे बड़ी खुशी है कि इन जातियों में इस अवस्था में भी इस दल के सैनिक मिले हैं और आसानी से मिलने की आशा रखी जा सकती है।

---

www.vinoba.in

क्रांति की दिशा में—

'एक दिन में वितरण' और 'दाता-आदाताओं का सहयोग'

(वसंत बोंबटकर)

एक दिन में क्रांति की बात विनोबाजी देश के सामने एक साल से रख रहे हैं। जब देश की जनता एक दिन में सारी जमीन बाँटेगी, तब बाँटेगी, लेकिन जो जमीन आज हमको भूदान में मिली है, वह एक ही दिन में क्यों न बाँट दें ? एक दिन की क्रांति की ओर बढ़ने का ठोस और सही कदम यही होगा। नाग-विदर्भ भूदान-समिति ने १३ जून १९५६ को इसे सोचा और २ अक्टूबर, यह बँटवारे का दिन घोषित किया। बँटवारा जनता ही करे, यह भी साफ कहा गया। कार्यकर्ता केवल सहायक बन कर काम करेंगे, यह माना गया। १५०० गाँवों में २०००० एकड़ भूमि का बटवारा करने का कार्यक्रम बनाया गया।

पूर्व-तैयारी

कम-से-कम एक परिवार को पूरी जमीन मिल सके, वे ही गाँव (याने चार एकड़ से ज्यादा भूमि जहाँ मिली है।) वितरण के लिए चुने गये। दाताओं द्वारा दी गयी जमीन का सरकार द्वारा प्रमाणीकरण (Vesting) भी नहीं हुआ था। इसलिए दाताओं का दान देने का हक है या नहीं, यह जाँचने का काम सरकार की ओर से जल्द-से-जल्द हो, ऐसी संबंधित अफसरों से प्रार्थना की गयी। लेकिन उनके भरोसे बैठना ठीक नहीं था, क्योंकि २ अक्टूबर के पहले सब काम पूरा होना आवश्यक था, इसलिए कार्यकर्ताओं ने गाँव-गाँव जाकर निम्नलिखित जानकारी हासिल की :

(१) गाँव में जाकर दाताओं से मिलना। उनकी जमीन के सर्वे नं० और दान में दी हुई जमीन की सीमा नोट करना और खेत देख कर आना। गाँव के पटवारी व अन्य लोगों से मिल कर दाता दान देने का सही अधिकार रखता है या नहीं, इसकी छानबीन करना।

(२) सब दाताओं के खेत देख कर उसके कितने प्लॉटस् बन सकते हैं, यह गाँव वाले लोगों की मदद से तय करना।

(३) उस गाँव में मिली हुई जमीन में झगड़ेवाली, छोटे टुकड़े के कारण बाँटने के नाकाबिल और बंजर कितनी है, इसको नोट करना।

इसके लिए सर्वे फॉर्म छापे गये, जिसमें जमीन का पूरा ब्योरा ऊपर की सब बातें मिला कर नोट किया जाता था।

(४) गाँव में बड़े-बड़े भित्ति-चित्र लगाये गये। उसमें २ अक्तूबर के वितरण का ऐलान था और वितरण के मोटे-मोटे नियम बड़े अक्षरों में आने-जाने वाले आसानी से पढ़ सकें, ऐसी महत्त्व की जगह पर लगाये गये।

(५) वितरण के बारे में तफसीलवार ब्योरा बताने वाले पर्चे हर गाँव में बाँटे गये।

(६) आम सभा लेकर या खानगी बैठकों में लोगों को वितरण के नियम समझाये गये।

(७) गाँव-गाँव से स्वयंसेवक मांगे गये, शिविर लिये गये।

वितरण-प्रशिक्षण-शिविर

जुलाई और अगस्त माह में सर्वे का काम पूरा करने की कोशिश की गयी और सितंबर माह में वितरण-शिविर की शृंखला लगी। हर एक तहसील में शिविर लिये गये। ३१ शिविरों में २००० कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया गया। वितरण जिस गाँव में हो, उसी गाँव में शिविर लिये गये, दिन भर वितरण के नियम और सिद्धांत समझाये गये और प्रत्यक्ष वितरण करके बताया गया। वितरण के लिए गाँव बाँटे गये। वितरण के कागजात दिये गये और २ अक्तूबर के दिन का कार्यक्रम दिया गया। इन वितरण-शिविरों में ५० कार्यकर्ताओं ने कांचीपुरम् सम्मेलन की व्याख्या के अनुसार जीवनदान भी दिया। वितरण-शिविर के भोजन के लिए भूदान-समिति या कार्यकर्ता को एक पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ा। सब बोझ जनता ने ही उठाया।

इस तरह जुलाई-अगस्त में सर्वे का काम और जनता में प्रचार खूब हुआ। डुग्गी भी बजवायी गयी।

१ अक्तूबर को कार्यकर्ता अपने नियोजित गाँव में वितरण के लिए गये और २ अक्तूबर को करीब १ हजार गाँवों में १५ हजार एकड़ भूमि का बँटवारा करके पू० महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि अर्पण की गयी।

जनशक्ति हाथ में लगी

जनता ने वितरण किया, यह इसकी विशेषता है, जो जन-आंदोलन की बुनियाद है। इस कार्यक्रम से हमको नयी शक्ति का दर्शन हुआ। जनता में जाने के लिए प्रवेश-द्वार मिला और २ हजार लोगों ने वितरण के शिविर में हिस्सा लिया, जब कि पहले १०० लोग ही थे। इससे हमारी ताकत कई गुना बढ़ी। जनता में उत्साह की लहर दौड़ी। वितरण के पावन प्रसंग देख कर लोगों का जीवन धन्य हुआ। हमको पहले से मालूम होता, तो हम अपने दूसरे साथियों को साथ लाते, ऐसा लोग कहने लगे। गरीब जनता में जो उदारता का दर्शन हुआ, इससे सब प्रभावित हुए और प्रेम से ओत-प्रोत हुए। उन्होंने अपने जीवन में एक नयी शुद्धि पायी।

* * *

दूसरा कदम : दाता-आदाताओं की सघन पदयात्राएँ

वर्धा तहसील में ६ हजार एकड़ जमीन मिली थी और ५०० आदाताओं में वह वितरित की गयी थी। १५० आदाताओं को ३०००) का साधनदान भी दिया गया। लेकिन उसके बाद एक ऐसी अवस्था आयी कि कार्यकर्ताओं के प्रयत्नों के बावजूद कोई खास नतीजा नहीं निकलता था। सब रास्ते की तलाश में थे। कार्यकर्ताओं ने सोचा कि यदि ५-६ कार्यकर्ता इतना काम कर सकते हैं, तो जनता ही यदि इस आंदोलन को उठाये, तो बेड़ा ही पार होगा। पर इस जन-शक्ति को जगायें कैसे ? १५०० दाता और ५०० आदाता सर्वोदय-परिवार में आ चुके हैं। वे इस काम में सहानुभूति रखते हैं। क्यों न उनको कहा जाय कि वे इस आंदोलन को उठावें ?

अब कार्यकर्ताओं के सामने एक नयी राह खुल गयी। कार्यकर्ता जनशक्ति जगाने के लिए देहात में घूमने निकले। कई दाता बेचैन दिखे। वे सोचते : 'दान देकर हम बेवकूफ तो नहीं बने ?' तो ऐसे दाताओं को भूदान में सहयोग देने के लिए कार्यकर्ताओं ने आवाहन किया। लगातार प्रचार करने से भूमिहीन भी जाग्रत हो गये थे। वे इस आंदोलन को जल्द-से-जल्द सफल देखना चाहते थे और उसके लिए मदद करने की उनकी इच्छा थी।

पवनार (वर्धा) में दाता-आदाताओं का सम्मेलन ३ मई '५६ को बुलाया गया। १५० लोग आयेंगे, ऐसी कल्पना थी, लेकिन ५०० लोग आये। सम्मेलन में आदाताओं के कठिनाइयों पर भी विचार हुआ। श्री बंग के आवाहन पर दाता-आदाता सभी ने मिल कर सामूहिक पदयात्रा निकालना तय किया एवं कार्यकर्ताओं ने देहातों में घूम कर भूमिहीन और आदाताओं से संपत्तिदान-पत्र भरने का काम शुरू किया। भूदाता-संपत्ति-दाताओं को सामूहिक पदयात्रा में हिस्सा लेने के लिए तैयार किया।

ता० १५ से २३ अक्तूबर के लिए वर्धा तहसील को ५ केंद्रों में बाँट कर १५ अक्तूबर को शिविर चलाये गये। सैकड़ों लोग शिविर में आये। ४० टोलियाँ प्रचार के लिए निकलीं। देहात के किसान, छोटे-छोटे कार्यकर्ता, संपत्तिदाता ही इसमें ज्यादा थे। दाता के नाते उनकी वाणी में बल था। सब तहसीलों में एक नवचैतन्य की लहर उठी।

ता० २३ को सवेरे सब पदयात्री २५ टोलियों में बँट कर वर्धा शहर में दान माँगने के लिए निकले। किसान-मजदूर शहर ही अब के लोगों को समाज के लिए त्याग करने की शिक्षा देने लगे ! वे कतार में खड़े होकर घर के सामने गीत गाते थे और कुछ भाई अंदर जाकर घरवालों से विचार समझाते थे। देहातियों के मन में अब तक जो डर की भावना थी, अपने बारे में जो न्यूनगंड वे महसूस करते थे, वह मिट गया। हमारे पास भी कुछ विचार शहरवालों को देने के लिए हैं, ऐसी आत्म-सन्मान की भावना उनमें जगी। यह एक बड़ा मानसिक परिवर्तन हुआ एवं ग्रामराज का बिगुल बजा।

इस मंथन में ३२०० लोगों ने संपत्तिदान में हिस्सा लिया। ८०० एकड़ भूमि-दान मिला। ९० लोगों ने जीवनदान दिया। विराट जनशक्ति का यह जो आविष्कार हुआ, वह अपूर्व था। गत चार सालों में जो काम नहीं हुआ था, वह इस एक सप्ताह में हुआ। सारा खर्च जनता ने उठाया। एक साधू, जिसके पास सट्टे पर नंबर लगाने वाले लोग बैठते थे, बाद में कहने लगा : "आज तक का मेरा सारा जन्म बेकार गया। सच्चा काम मैंने नहीं किया। अब भगवान् ने ही मुझे सद्बुद्धि दी है।"

दाताओं आदाता-द्वारा सामूहिक पदयात्रा निकालने से एक विराट जनशक्ति प्रकट हो सकती है, इसका दर्शन हुआ। "एक दिन की क्रांति का" सामान जुटाने का यह एक दूसरा कारगर तरीका है।

---

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की क्रांति-यात्रा से–

(निर्मला देशपांडे)

'नारायण नारायण जय गोविन्द हरे' का मधुर स्वर सुनायी देने लगा और पहाड़ियों की गोद में बसा हुआ 'गांधीग्राम' दिखायी देने लगा। गांधीजी के भक्त श्री जी० रामचन्द्रन् तथा उनकी धर्मपत्नी डॉ० सौंदरम् के अविराम प्रयत्नों का फल 'गांधीग्राम' है, जहाँ नयी तालीम-शिक्षण-केन्द्र, रूरल इन्स्टीट्यूट, समाज-सेवा-शिक्षण-केन्द्र आदि संस्थाएँ खड़ी हुई हैं और करीब हजार विद्यार्थी ग्राम-सेवा की तालीम पा रहे हैं। गांधीग्राम की शांतिसेना के स्त्री-पुरुष-सैनिकों ने विनोबाजी को अभिवादन किया, तो विनोबाजी ने कहा, "वैसे यहाँ का जितना कार्य चलता है, वह कुल-का-कुल शांति के लिए है, फिर भी शांतिसेना की कल्पना एक महत्त्व का विचार है। ऐसी सेना अपने देश में खूब बढ़नी चाहिए। आपका यह स्थान हम सबके लिए घर भी है, तीर्थस्थान भी।" पहले दिन वहाँ के कार्यकर्ताओं के साथ चर्चा करते हुए कहा, "आज कुल गांधी-विचार खतरे में है। इसलिए हम सबको भूदान-यज्ञ को सफल बनाने में अपनी-अपनी शक्ति लगा देनी होगी।"

गांधीग्राम के निकटवर्ती दो गाँवों में ग्रामदान हुआ है। दूसरे दिन प्रातःकाल विनोबाजी ने वे दोनों गाँव देखे। एक हरिजनों का गाँव है, जहाँ ६० परिवार हैं और १५० एकड़ जमीन है। दूसरा है—रंगस्वामीपुरम्, बीस परिवार वाला। वहाँ साठ एकड़ अच्छी जमीन है। आज तक उस गाँव से बाहर के कोर्ट में एक भी झगड़ा नहीं गया है। गाँववालों ने यह भी तय किया है कि अब वे सिनेमा भी नहीं देखेंगे। दोनों जगह अंबर-परिश्रमालय का उद्घाटन विनोबा ने किया। विनोबाजी ने गाँववालों से कहा कि जब एक भाई ने मुझसे कहा कि ५० प्रतिशत गाँवों का ग्रामदान हुआ, तो क्या काफी नहीं माना जायगा? तो मैंने पूछा, '१०० में से कितने प्रतिशत लोग मरने वाले हैं?' उन्होंने कहा कि 'सौ प्रतिशत।' तब मैंने कहा: 'मरने के लिए सौ फीसदी, तो जीने के लिए पचास फीसदी क्यों? यमराज को सौ प्रतिशत का दान और बाबा को सिर्फ पचास ही प्रतिशत का दान क्यों?' तो हमारा विश्वास है कि देश के कुल के कुल गाँवों में ग्रामदान हो जायगा। पूरी श्रद्धा रखिये कि यह कार्य ईश्वर चाहता है, इसलिए होकर रहेगा। इसमें पूरा का पूरा भला ही भला है।"

दिंडीगल की विराट् सभा में हजारों नागरिकों ने मौन में जो अद्भुत् शांति रखी, उसका बाबा के चित्त पर बहुत असर हुआ। महामानव समुद्र के जैसी उस सभा में प्रवचन के समय बहनों और बच्चों के कारण कुछ थोड़ी आवाज सुनायी दे रही थी, परन्तु मौन के समय अपार शांति रही और बच्चे, बहनें, भाई, सब ध्यानस्थ होकर भगवान् का स्मरण करने लगे। दिंडीगल के नागरिकों को सम्पत्तिदान का विचार समझाते हुए विनोबाजी ने कहा, "सम्पत्तिदान की कल्पना पुराने संतों की कल्पना नहीं है। हम आपके परिवार का सदस्य बन कर आपके घर में दाखिल होना चाहते हैं। शहर के हर घर में भूदान का साहित्य पहुँचना चाहिए। आज जनता में अपना काम खुद करने की वृत्ति नहीं है। वह हर काम के लिए सरकारी कानून की बात करती है। समाज का ढाँचा हम अपनी शक्ति से बदल सकते हैं, यह अभी तक लोगों के ध्यान में नहीं आया है। आज दुनिया राजनीति से बिल-कुल बेजार है। दुनिया को राजनीति से मुक्त करना ही इस आन्दोलन का उद्देश्य है। सम्पत्तिदान का मूल विचार यह है कि हमारी कमाई पर केवल हमारे परिवार का ही नहीं, समाज का भी हक है। इसलिए कमाई का एक हिस्सा समाज को सतत देते रहना हमारा कर्तव्य है। सम्पत्ति भी गलत तरीके से हासिल नहीं करना चाहिए। हर शख्स सम्पत्तिदान दे, तो पंचवर्षीय योजना से भी बड़ी योजना सहज बन सकती है।"

मदुरा में कहा, "यहाँ प्राचीन काल से एक सांस्कृतिक विचार चला आया है, तो सम्पत्तिदान भी यहाँ खूब चलेगा।" जब एक भाई ने पूछा कि 'क्या सम्पत्तिदान देने से इन्कम टैक्स से मुक्त होंगे?' विनोबाजी ने कहा, "सारे टैक्स देने पर क्या बचा हुआ हिस्सा आप अपने घर में खर्च करते हैं। हम आपके परिवार में दाखिल होना चाहते हैं, व्यापार में नहीं। व्यापार में आपको नफा-नुकसान हो, तो भी हमें हर साल सम्पत्तिदान मिलता ही रहेगा, क्योंकि आप अपने घर में कुछ खर्चा करते ही होंगे, तो उसमें हमारा हिस्सा रहेगा। इस काम की यह खूबी है कि यह सरकार के कानूनी समर्थन पर निर्भर नहीं है। सरकार अगर सम्पत्तिदान को इन्कम टैक्स से मुक्त कर दे, तो वह उसकी दया होगी और इन्कम टैक्स लगाये, तो विरोध आवेगा। हमें न सरकार की दया चाहिए, न उसका विरोध। हम चाहते हैं कि स्वतन्त्र जन-शक्ति निर्माण हो।"

जीवन के बुनियादी सिद्धान्तों पर चर्चा करते हुए विनोबाजी ने एक भाई से कहा कि "मानव के लिए सबसे खतरनाक चीज अगर कोई है, तो वह है, उसकी जड़ जमीन से उखड़ना। मनुष्य को खेती से अलग करने में उसके लिए सबसे बड़ा खतरा है। अमेरिका के हर १० मनुष्य में एक मनुष्य दिमागी बीमारी से पीड़ित है। इसका कारण यह है कि वहाँ मनुष्य जमीन से उखाड़ा जा रहा है। मनुष्य का जीवन जितना पूर्ण होगा, उतना ही वह सुखी होगा। पूर्ण जीवन में भूमि-सेवा एक अनिवार्य अंग है। खेती से आरोग्य और मानसिक आनन्द प्राप्त होता है, बुद्धि तीव्र होती है। वह भगवान् की भक्ति का भी श्रेष्ठ साधन है। पूर्ण जीवन का मौका जितने लोगों को मिलेगा, उतना समाज में समाधान और संगति रहेगी।"

सर्व-सेवा-संघ के तंत्रमुक्ति के प्रस्ताव के बाद वे गाँव के प्रमुख लोगों से कहते हैं: "अब तो यह आन्दोलन हमने आप पर सौंपा है।" गाँव के दाताओं की एक समिति बना कर उन्हें काम की जिम्मेवारी सौंपी जाती है। दाता पहले स्वयं अपना पूरा हिस्सा दें, इसकी कोशिश की जाती है। ओड्डमूशत्तरम् में एक भाई ने ११ एकड़ दिये थे, परन्तु उसका छठाँ हिस्सा २२ एकड़ का होता था। बाबा ने कहा, "खुद छठाँ हिस्सा दिये बगैर दूसरों से कैसे माँगोगे?" इसके बाद मुश्किल से एकाध मिनट गया होगा कि उस भाई ने कहा, "मैं २२ एकड़ दूँगा।" दूसरा एक भाई गरीब था। परन्तु उसने भी अपने ७ एकड़ में से छठाँ हिस्सा छोड़ दिया। कोइंबटूर जिले के एक जमीनदार भाई ने हफ्ते के तीन दिन भूदान के काम के लिए देने का संकल्प किया था। सब कार्यकर्ता चाहते थे कि वे अपना पूरा समय इसमें देकर उस जिले की जिम्मेवारी उठायें। वे भाई जरा हिचकिचा रहे थे, क्योंकि उन्हें घर में भी कुछ समय देना पड़ता था। बाबा ने कहा:

> "अरे, पत्नी के बाद तो एक युग खत्म हुआ और दूसरा युग शुरू हुआ! अतः इस नये युग में पूरा समय इसी काम में देना होगा।"
>
> युगांतर की बात सुनते ही वे भाई उठ खड़े हुए और उन्होंने अपना पूरा समय देकर जिले की जिम्मेवारी उठाने का संकल्प किया। चिंगलपुट जिले के एक भाई भी, जिन्होंने तमिलनाड़ का प्रथम ग्रामदान प्राप्त किया था और उस गाँव की अपनी सारी जमीन दान दी थी, पूरा समय देने में जरा हिचकिचा रहे थे। परन्तु जब बाबा ने कहा कि—
>
> 'आप नहीं उठायेंगे, तो हम समझेंगे कि इस जिले में हमारा काम नहीं होगा। हमें इसकी कोई चिंता भी नहीं है। पर क्या क्रांति घर के काम की राह देखेगी? क्रांति में तो घरों की आहुति देनी पड़ेगी, दर-दर घूमना पड़ेगा। पुराने क्रांतिकारियों ने जो तकलीफें उठायीं, उससे कम हम क्यों उठायें?"

यह सुनते ही उस भाई ने जिले की जिम्मेवारी उठाने का संकल्प किया। भविष्य के काम के बारे में हिदायत देते हुए बाबा ने कहा, "सिर्फ जमीन प्राप्त नहीं करनी है, प्राप्त हुई कि फौरन बाँट डालो, ऐसा होना चाहिए। बँटवारे के नियमों के अनुसार बाँटी जानी चाहिए, इतना ख्याल रखिये। अब यह जन-आन्दोलन होगा। गाँव-गाँव में आप कुछ प्रमुख लोगों की समिति बना सकते हैं। शहरों की उपेक्षा करने के हमारे आंदोलन के लिए खतरा पैदा होगा। देहातों में हम सीधे प्रवेश कर सकते हैं, परन्तु शहरों में साहित्य के जरिये प्रवेश होगा।"

भूदान में काम करने वाले लोकसेवकों के लिए विनोबाजी ने एक प्रतिज्ञापत्र बनाया जो इस प्रकार है: "(१) सत्य, अहिंसा और अपरिग्रह में मेरी पूरी निष्ठा है और तदनुसार जीवन बिताने की मैं कोशिश करूँगा। (२) लोकनीति की स्थापना से ही दुनिया में सच्ची स्वतंत्रता हो सकेगी, ऐसा मेरा विश्वास है, इसलिए मैं किसी प्रकार की दलीय राजनीति या सत्ता की राजनीति में भाग नहीं लूँगा। (३) बिना किसी कामना से, समर्पण बुद्धि से मैं लोकसेवा करता रहूँगा। (४) मैं अपना अधिक से अधिक समय और चिंतन-सर्वस्व, सर्वोदय के अर्थात् भूदान-मूलक-ग्रामोद्योग प्रधान, अहिंसक क्रांति के काम में लगाऊँगा।"

पट्टीवीरनपट्टी के एक धनी सज्जन ने बाबा की माँग पर कहा: मेरे घर में १३ व्यक्ति हैं। आप १४ वें हो गये। इसलिए मैं आपको संपत्तिदान में हर साल चौदहवाँ हिस्सा अर्पण करता रहूँगा।" उन्होंने छठा हिस्सा-भूमिदान भी दिया था। इस काम में वे दिलचस्पी भी लेते रहे हैं।

---

www.vinoba.in

साहित्य-सत्कार

हिन्दी-साहित्य-मंदिर, अजमेर

१. **विनोबा चित्रावली**, पृष्ठ-संख्या ८८, मूल्य बारह आने।

प्रस्तुत पुस्तक में विनोबाजी की यात्राओं के अनेक सुंदर चित्र, विभिन्न कार्य करते हुए, दिये गये हैं। खास करके हैदराबाद और उत्तर प्रदेश की यात्रा के ये चित्र हैं। साथ में उनकी जीवनी, उनके विचार, आंदोलन का परिचय, प्रार्थना आदि भी संक्षेप में दिये गये हैं। पुस्तक संग्रहणीय है।

२. **नेहरू चित्रावली**, पृष्ठ-संख्या ९६, मूल्य एक रुपया।

बाल, युवा और प्रौढ़ नेहरू का सचित्र विभिन्न दर्शन, विभिन्न रूपों में इसमें सुंदरता से प्रकट हुआ है। साथ में उनकी जीवन-झाँकी भी दी गयी है।

३. **गांधी चित्रावली**, पृष्ठ-संख्या १४४, मूल्य एक रुपया।

चित्रमय बापू का यह मनोरम दर्शन अनेक भावनाओं और स्मृतियों को जाग्रत कर देता है। साथ में उनका जीवनसंदेश भी रचनात्मक कार्य के विवेचन और प्रार्थना-सहित दिया गया है।

उपर्युक्त तीनों चित्रावली के लेखक और संपादक श्री जीतमल लूणिया हैं।

४. **रामनाम की महिमा**, चौथा संस्करण, ले० महात्मा गांधी, पृष्ठ-संख्या १४४, मूल्य एक रुपया।

बापू ने विभिन्न समय पर रामनाम की महिमा के बारे में जो लेख लिखे हैं, उनका यह महत्त्वपूर्ण संग्रह है, जिसमें रामनाम की कीमिया का प्रत्यक्ष दर्शन प्रतिबिंबित हो उठा है। तारणहार राम का यह विविध दर्शन प्रभावकारी है ही।

५. **तपोधन विनोबा**, ले० बाबूराव जोशी, पृष्ठ-संख्या २१०, मूल्य डेढ़ रुपया।

विनोबा के जीवन-प्रवाह का विविध परिचय देने का पर्याप्त प्रयत्न लेखक ने किया है। यद्यपि यह पूर्ण दर्शन नहीं हो सकता, तथापि जीवन-झाँकी की दृष्टि से इसकी उपयोगिता काफ़ी है।

६. **विश्व की महान महिलाएँ**, द्वितीय संस्करण, ले० शचीरानी गुर्टू, पृष्ठ-संख्या २२०, मूल्य दो रुपये।

देश-विदेश की २२ महान् महिलाओं के जीवन का, उनके कार्यों का और उनकी विशेषताओं का सम्यक् परिचय प्रस्तुत पुस्तक पेश करती है। ऐसी महनीय जीवन-झाँकियाँ न सिर्फ़ महिलाओं के लिए प्रेरक हैं, बल्कि सबके लिए भी पठनीय है।

भारतीय-ग्रंथमाला, दारागंज, प्रयाग

१. **सर्वोदय राज : क्यों और कैसे ?** ले० भगवानदास केला, पृष्ठ-संख्या ७६, मूल्य दस आने।

विभिन्न प्रकार की राज्यपद्धतियों का अनुभव लेकर अब दुनिया सर्वोदय की प्रतीक्षा में गर्भवेदना महसूस कर रही है। ऐसे समय सर्वोदय का सर्वांगीण शास्त्रीय अध्ययन आवश्यक हो जाता है। प्रस्तुत पुस्तक में केलाजी ने उसकी एक झाँकी देने का यशस्वी प्रयत्न किया है।

२. **सर्वोदय की अर्थव्यवस्था** (दूसरा संस्करण), ले० जवाहिरलाल जैन, पृष्ठ-संख्या १२८, मूल्य डेढ रुपया।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने कुछ आधारभूत सिद्धांतों और विशेषताओं का विवेचन करके उसकी कुछ रूपरेखा प्रस्तुत की है, जो इस दिशा में अध्ययन की अच्छी सामग्री प्रस्तुत करती है।

३. **हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ** (तेरहवाँ संस्करण), ले० भगवानदास केला, पृष्ठ-संख्या १६०, मूल्य डेढ रुपया।

आज देश में जो भिन्न-भिन्न महत्त्वपूर्ण समस्याएँ हैं, उनका राष्ट्रीय दृष्टिकोण से सर्वोदय के आधार पर विविध हल प्रस्तुत करने का लेखक ने प्रामाणिक प्रयत्न किया है, जो चिंतनीय है।

४. **भारतीय अर्थशास्त्र**, ले० भगवानदास केला, पृष्ठ-संख्या ६५२, मूल्य पाँच रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक में अर्थशास्त्र की सम्यक् विवेचना, उसके अनेक अंगों-उपांगों के अध्ययन सहित की गयी है। पहले सर्वसाधारण रूप से इस विषय का अध्ययन प्रस्तुत करके लेखक ने सर्वोदय की भूमिका से उसकी तुलना की है और उसका औचित्य प्रतिपादन किया है। अर्थशास्त्र के तात्त्विक और व्यावहारिक रूप की मीमांसा गहराईपूर्वक की गया है। पुस्तक महत्त्वपूर्ण है, इसमें संदेह नहीं।

यज्ञ-प्रकाशन-समिति, 'भूमिपुत्र-कार्यालय', बडोदा

१. **सर्वोदय अने भूदान-यज्ञ**, ले० बबलभाई महेता, पृष्ठ ३२, मूल्य दो आना।

२. **धरतीनां गीतो**, चतुर्थ संस्करण; पृष्ठ ४७, मूल्य दो आना।

३. **यज्ञ-दीपका**, ले० विमला बहन, पृष्ठ ४०, मूल्य तीन आना।

प्रस्तुत तीनों पुस्तिकाएँ गुजराती भाषा में भूदान-आंदोलन के हार्द और तत्व को प्रकट करती है। भूदान-दर्शन का छोटा, लेकिन सुंदर प्रयत्न इन पुस्तिकाओं में प्रस्तुत है।

४. **मा धरतीने खोळ**, (गुजराती) ले० नारायण देसाई, पृष्ठ १३८, मूल्य बारह आना।

भूदान रूपी जीवनयात्रा में प्राप्त विराट् दर्शन की अनेक झाँकियाँ भूमाता के विविध रूपों सहित इसमें प्रकट हुई हैं। पुस्तक प्रेरक और मनोरंजक है।

५. **साम्ययागी विनोबा**, तृतीय संस्करण (गुजराती), ले० प्रबोध चोकसी, पृष्ठ १२४, मूल्य आठ आना।

विनोबा की विभिन्न जीवन-धाराओं का मूलग्राही चित्रण, विवेचन और उनकी क्रांतिकारी जिंदगी के अनेक पहलू इस पुस्तक के द्वारा लेखक ने हमारे सामने प्रस्तुत किये हैं। उनके अंतर्जीवन का मर्म-परिचय भी सहज भाव से कई स्थानों पर प्राप्त हो जाता है।

अन्य प्रकाशन

अंबर चरखा, ले० तरुणभाई, प्र० सर्वोदय-साहित्य-प्रकाशन, बुलानाला, काशी। पृष्ठ-संख्या २००, मूल्य तीन रुपये, जो कुछ अधिक लगता है।

इस पुस्तक के संबंध में श्री धीरेंद्र भाई ने भूमिका में ठीक ही लिखा है:—

"पुस्तक में अंबर चरखे के आविष्कार के इतिहास का पूरा-पूरा विवरण है, जिससे मालूम होगा कि इसके पीछे कितनी साधना रही है। जिसके गर्भकाल में इतनी साधना रही हो, उसके जीवन-विकास के लिए भी उतनी ही साधना की आवश्यकता है। अंबर चरखा-प्राप्ति के लिए जनता की और उसके प्रसार के लिए कार्यकर्ताओं की आज जो कुछ जल्दबाजी दिखलायी दे रही है, वह इस चरखे के उद्देश्य की पूर्ति के लिए घातक भी हो सकती है, क्योंकि अंबर चरखा जहाँ साधनहीन, असहाय लोगों के लिए आशा की मूर्ति बन सकता है, वहीं साधनहीन और असहाय जनों के शोषण के नये अवसर उपस्थित कर सकता है। अतः अंबर चरखे के सहायक सावधानी से काम करें, इसकी आवश्यकता है। इस काम में यह पुस्तक उनकी पूर्ण सहायक होगी।" —ल० भा०

सधन्यवाद प्राप्तः आदर्श-जीवन एवं मोक्ष, ले० स्वामी नारायणानन्द, प्र० एन. के. प्रसाद एंड को. ऋषिकेश (उ. प्र.), पृष्ठ-संख्या १७४, मूल्य ढाई रुपये।

१. **अणुव्रत**, पाक्षिक, सं० देवेन्द्रकुमार, सत्यनारायण मिश्र, अणुव्रत कार्यालय, ३, पोर्चुगीज स्ट्रीट, कलकत्ता १, पृष्ठ-संख्या ११०, वार्षिक मूल्य छह रु०, वार्षिक विशेषांक मूल्य एक रुपया।

२. **खादी-ग्रामोद्योग** (अंग्रेजी), त्रैमासिक, सं० प्र० सी० के० नारायण स्वामी, डायरेक्टर ऑफ पब्लिसिटी, अ. भा. खादी-ग्रामोद्योग-बोर्ड, मिस्त्री भवन, दिनशॉ वॉछा रोड, बंबई १। पृष्ठ-संख्या २१२, वार्षिक विशेषांक, मूल्य १)

३. **श्रीवेंकटेश्वर समाचार**, साप्ताहिक, सं० पं० देवेन्द्र शर्मा शास्त्री, प्र० खेमराज श्रीकृष्णदास, 'श्रीवेंकटेश्वर' स्टीम प्रेस, बंबई ४। हीरक जयन्ती-अंक (१८९६-१९५६), पृष्ठ-संख्या १८०।

४. **राजस्थान की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ**, प्रांतीय पंचम सर्वोदय-संमेलन, मकराना के अवसर पर प्रकाशित, प्र० मंत्री-राजस्थान समग्र सेवा-संघ, किशोर निवास, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर। पृष्ठ-संख्या ९८, मूल्य दो आना।

५. **भूदान-यज्ञ, एकांकी** (राजस्थानी में), ले० जवाहिरलाल जैन, प्र० राजस्थान भूदान-यज्ञ-समिति, जयपुर। पृष्ठ-संख्या २९, मूल्य तीन आना।

६. **सामूहिक पदयात्रा : क्यों और कैसे ?** ले० ठाकुरदास बंग, प्र० सामूहिक पदयात्रा उपसमिति, गोपुरी, पो० नालवाडी, वर्धा, मूल्य तीन आना।

७. **केनोपनिषद्** हिन्दी पद्यानुवाद सहित, अनु० वासुदेव गोस्वामी, प्र० गोस्वामी पुस्तकसदन, जानकी पार्क रोड, रीवा। पृष्ठ-संख्या १६, मूल्य दो आना।

८. **नैतिक सलाह अर्थात् समृद्धि की राह**, ले० महात्मा श्री शम्भूदयालजी मोतिळावाले, प्र० पं० रघुवीरसिंह गौड, कृष्णनगर, पो० यूसुफ सराय, नयी दिल्ली १६। पृष्ठ-संख्या २९, मूल्य चार आना।

www.vinoba.in

सामूहिक पदयात्रा के बढ़ते चरण

बेलगाँव जिले में सामूहिक पदयात्रा

बेलगाँव जिले की सामूहिक भूदान-पदयात्रा चिकोड़ी तहसील से आरंभ हुई। ७ नवंबर को 'सदलगा' में शिविर संपन्न हुआ, जिसमें कर्नाटक के भिन्न-भिन्न जिलों से आये हुए ३५ कार्यकर्ता, ४० स्थानिक कार्यकर्ता, २३ बहनें और ३०-३५ विद्यार्थी शामिल हुए थे। इस बार बेंगलूर से भी ६ कार्यकर्ता आये थे। ७ नवंबर को सवेरे कोल्हापुर जिले के पुराने कार्यकर्ता श्री बाबा रेडीकरजी ने "महाराष्ट्र की सामूहिक पदयात्रा के अनुभव और ग्रामदान-प्राप्ति" के बारे में उद्बोधक भाषण किया।

८ नवंबर को सवेरे ९० कार्यकर्ताओं ने १७ टोलियाँ बना कर, जिसमें २ टोलियाँ बहनों की थीं, भूदान का जयघोष करते हुए विभिन्न दिशाओं की ओर प्रस्थान किया। चिकोडी तहसील के हरएक गाँव में भूदान का क्रान्ति-विचार फैला कर सब कार्यकर्ता २६ ता० को लौट आये।

२६-२७ ता० के समारोप-शिविर के लिए मध्यप्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ता श्री ठाकुरदास बंग और श्री सुरेश रामभाई आये हुए थे। २६ ता० को दोपहर में टोली-नायकों ने यात्रा के अनुभव बताये। बाद में बंबई के चिंतनशील साधक और बंबई-उपनगर भूदान-समिति के अध्यक्ष पू. केदारनाथजी ने हमें आशीर्वाद दिया।

रात को जाहिर सभा हुई, जिसमें प्रा. बंग और श्री सुरेश रामभाई ने भाषण दिया। छोटे-छोटे गरीबों को पहले दान देना चाहिए; क्योंकि उनके दान से ही बड़ों का बड़ा मोह छुड़ाने की कुंजी हाथ में आ जायेगी, यह विचार बिल्कुल सरलता से रखा गया और हमने आशा तो नहीं की थी, बल्कि ६ दानपत्र मिल ही गये। प्रा. बंग ने मध्यप्रदेश की सामूहिक पदयात्रा का प्रदीर्घ अनुभव बताया और इस तरीके से कार्यकर्ताओं में किस तरह से नवचैतन्य निर्माण हो रहा है और जनशक्ति प्रकट हो रही है, इसका दिग्दर्शन किया। इन दो मेहमानों के आगमन के कारण कार्यकर्ताओं के विचारों में स्पष्टता आयी और उनका जोश बढ़ गया। भूदान-शिविर का सब खर्च स्थानिक लोगों ने उठाया।

१५ टोलियों ने ३७५ मील की पदयात्रा की। ७५ एकड़ भू-दान, २५० रु० साधन-दान और ४५० रु० वार्षिक संपत्तिदान मिला। ७१० गुण्डियाँ सूत्रदान भी मिला। २१० रु० की साहित्य-बिक्री हुई। भूदान-साप्ताहिक के ६० ग्राहक बने।

—दिवाकर हरिदास

बहनों की टोली के अनुभव

सदलगा (बेलगांव जिला) के शिविर के बाद सामूहिक पदयात्रा के लिए निकली हुई टोलियों में कन्नड और मराठी भाषी बहनों की दो टोलियाँ निकलीं। मराठी भाषी बहनों की टोली का प्रमिलाताई कामत ने मार्गदर्शन किया। पहला पड़ाव छोटे-से गाँव, बाखाड़ में था। ग्राम-पंचायत के दफ्तर में सामान रख कर मैं और साथवाली बहन भारती सूत कातने बैठी, तो पचासों लड़के-लड़कियाँ जमा हुईं। हमने उन्हें विनोबाजी और भूदान की बातें सुनायीं। भारती बहन ने भूदान के गीत और नारे सिखाये। बच्चों ने रात की सभा में अपनी-अपनी माँ और बहनों को लाने की जिम्मेदारी खुशी से उठायी। हमने सूत-कताई और स्वाध्याय के बाद दोपहर में घर-घर जाकर बहनों से बातें कीं। सभा में आने के लिए उनको प्रोत्साहित करना पड़ता है, क्योंकि सभा में शरीक न होने की अपनी पुरानी रूढ़ि छोड़ने को शुरू में वे तैयार नहीं होती।

हम एक-एक करके सभी जमींदारों से भूदान की बात समझाने गयीं। लेकिन वे किसीकी भी बात सुनने की मनःस्थिति में नहीं थे। हम लोगों को देखते ही कहने लगे, "इन किसान शराबियों ने अपनी बुरी आदतों के कारण अपनी जमीन गँवायी और अब आप आते हैं फिर जमीन दिलवाने!" फिर भी निराश न होकर हम भूदान-विचार समझाती रहीं। हृदय-परिवर्तन की आशा रखनी चाहिए। हरिजन-बस्ती में भी हम हो आते थे। जिनके घर हमारा मुकाम था, उन्होंने अपनी कम जमीन में से भी दस बीघा जमीन भूदान में "भैयादूज" की भेंट के स्वरूप दी। हमने अनुभव किया कि उदारता के दर्शन महलों की अपेक्षा गरीबों की झोंपड़ी में अधिक होते हैं।

पदयात्रा के विभिन्न पड़ावों पर जनता की ओर से जो भी सूखी-गीली रोटी खाने को मिलती, खुशी से खा लेती थीं। पैदल चलने में तो हम बहनों को विशेष तकलीफ नहीं हुई, लेकिन सामान का बोझ साथ में ढोने से हाथों में कुछ तकलीफ हुई। दो बहनों के साथ तो छोटे-छोटे बच्चे भी थे। कठिनाइयों के बावजूद भूदान-कार्य के प्रचार की लगन से सहन-शक्ति बढ़ती गयी।

हम स्वतंत्र रूप से पहली ही बार सामूहिक पदयात्रा करने गयी थीं। अनुभवों के कारण अब हमारी हिम्मत बढ़ी है। हमें भले ही ज्यादा जमीन न मिली हो, फिर भी जनता-जनार्दन का प्रेम बहुत मिला। गाँवों की बहनें विश्वास से हमारे पास आकर बातें ध्यान से सुनती थीं। विचार-प्रचार की दृष्टि से हमारी एक सप्ताह की पदयात्रा सफल रही, ऐसा ही हम मानती हैं। बहनों की दोनों टोलियों को ७ दाताओं से १४ एकड़ भूमि और ६ दाताओं से संपत्ति-दान और साधनदान में ४५०) रु० मिले।

—सौ. लीलावती कामत

तमिलनाड क्रांति की दिशा में

—तमिलनाड के मदुरा जिले में, जहाँ विनोबाजी की यात्रा चल रही है, अब तक २१ ग्रामदान मिले हैं। यहाँ पर ग्रामदान की हवा तेजी से फैल रही है। कार्यकर्ता कहते हैं कि किसी भी गाँव में जाने पर ग्रामदान का विचार समझाया जाय, तो उन्हें वह पसंद आता है। गांधीग्राम की डॉ० सौंद्रम् भी इसी काम में लगी हैं। सर्वत्र उत्साह दिखाई दे रहा है।

—निर्मला

बिहार भूदान-यज्ञ-समिति की ओर से

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के पलनी के निश्चय के अनुसार आगामी १ ली जनवरी, १९५७ से प्रादेशिक भूदान-यज्ञ-समिति तथा जिला-समितियों का विसर्जन किया जा रहा है। अतएव सब जिला-समितियों को ३१ दिसम्बर तक का खर्च बही में पूरा लिख लेना चाहिए और जो रकम रुपयों की कमी के कारण अदा नहीं हो सकतीं, उनके पावनेदारों से वाउचर लेकर खर्च में लिखा जाये और पावनेदारों के नाम पेशगी खाते में जमा कर उन्हें रसीद दी जाये। १ ली जनवरी १९५७ से भूदान-कार्यकर्ताओं से उम्मीद की जाती है कि अर्थमुक्त और तन्त्रमुक्त होकर जनता की सेवा करेंगे और जनता से अपेक्षा रखेंगे कि वे उनका भरण-पोषण करें। भूदान-समितियाँ नहीं रहेंगी, तो स्वभावतः किसी कार्यकर्ता को वेतन देने की जिम्मेदारी बिहार भूदान-यज्ञ-समिति या जिला भूदान-यज्ञ-समितियों पर नहीं रहेगी।

जिला-समितियों का ३१ दिसम्बर १९५६ तक का हिसाब ३१ जनवरी १९५७ तक पूरा कर लेना चाहिए। इस काम के लिए जिला-दफ्तरों में केवल एक हिसाबी ही रहेंगे। उनका जनवरी का वेतन भी ३१ दिसम्बर तक के खर्च में जोड़ा जायेगा। हर जिले में पेशगी की रकमें वसूल कर लेनी हैं। अगर रकम वसूल नहीं हो सकती, तो किस कारण वसूल नहीं हो सकती, उस सबका विवरण अभी से तैयार करके तारीख १५ दिसम्बर तक इस दफ्तर में आ जाना चाहिए। अतएव कुल खर्च की रकम दिसम्बर में ही चुकायी नहीं जा सकती, आगामी मार्च १९५७ तक ही रुपये की अदाकारी हो सकेगी।

सामान की सूची मौजूद सामान से मिलान कर तैयार रखनी चाहिए। जो जिला-सेवक होंगे, उनके जिम्मे पर दूसरा आदेश पाने तक सारे सामान रखे जायेंगे।

बिहार भूदान-यज्ञ-समिति —लक्ष्मीनारायण, संयोजक
बुनियादगंज, गया, ८-१२-५६

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	क्रांति की राह पर—	विनोबा	१
२.	'बहुमत' बनाम 'सहमति'	धीरेंद्र मजूमदार	२
३.	अब भूदान का काम कौन और कैसे उठावेगा ?	विनोबा	३
४.	मलय-दर्शन !	सिद्धराज ढड्ढा	४
५.	क्रांति की वाहिका नयी तालीम	नेमिशरण मित्तल	५
६.	अंबर-प्रचार में सावधानी	विनोबा	६
७.	तंत्र-मुक्ति के बाद	,,	६
८.	नयी तालीम की तीन आधार-शिलाएँ	,,	७
९.	शान्तिदल : समय की सबसे बड़ी माँग	हरिभाऊ उपाध्याय	८
१०.	'एक दिनमें वितरण' और 'दाता-आदाताओं' का सहयोग	वसंत बोंबटकर	९
११.	तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से—	निर्मला देशपांडे	१०
१२.	साहित्य-सत्कार	—	११
१३.	सामूहिक पदयात्रा के बढ़ते चरण	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं० ४१, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in